

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_180513

UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No **H83**
S53M

Accession No **H 3210**

Author **शर्मा, अज्ञान**

Title **महक और कामकान 1959**

This book should be returned on or before the date
last marked below

महल और मकान

उपन्यासकार
यज्ञदत्त शर्मा

पुस्तकालय मंदिर,
कोट, (अमृतसर) देहरादून व

१९५६
साहित्य प्रकाशन, दिल्ली

प्रकाशक

साहित्य प्रकाशन

मालीवाड़ा, दिल्ली ।

प्रथम संस्करण १९५४

द्वितीय संस्करण १९५६

तृतीय संस्करण १९५८

चतुर्थ संस्करण १९५९

मूल्य : तीन रुपया

checked 1989

मुद्रक

रामा कृष्णा प्रेस

कटरा नील, दिल्ली

प्रोफेसर सुधांशु प्रकाश बाबू की बात सुनकर मुस्करा रहे थे। वह धीरे से बोले, “इस बार की अमेरिका-यात्रा से तो आपका दृष्टिकोण ही बदल गया प्रकाश बाबू ! परन्तु मुझे प्रसन्नता हुई कि आपके जीवन में व्यंग्य-विनोद ने स्थान पा लिया। वरना मुझे भय था कि कहीं किसी दिन कारखाने में किसी यंत्र के पास खड़े-खड़े आप भी एक यंत्र न बन जायें। अब मैं आशा करूँगा कि आप जड़ न रह कर प्रगति के क्षेत्र में पदार्पण करेंगे।”

“यंत्र से सम्भवतः प्रोफेसर साहब जीवन में भयभीत हो उठे हैं; परन्तु आज के युग में आप यह भुला कर नहीं चल सकते कि यह यंत्रों का ही युग है और बिना यंत्रों की सहायता से आज का मानव-समाज अप्रगतिशील है।” प्रकाश बाबू ने कहा।

“परन्तु यंत्रों का युग होने का यह अर्थ नहीं कि मानव पर यंत्र की प्रधानता दे-दी जाय, एक यंत्र का पेट भरने के लिए बीस व्यक्तियों को भूखा मार दिया जाय। यदि यह यंत्र-युग ऐसा हुआ तो मैं इस युग का विरोध करूँगा।” गम्भीरता पूर्वक प्रोफेसर सुधांशु बोले।

“विरोध ! और आप ?” कह कर प्रकाश बाबू खिलखिला कर हँस पड़े। “आपके जीवन का विरोध से कोई सम्बन्ध नहीं है प्रोफेसर सुधांशु ! पुस्तकों के पन्ने उलटने-पलटने से आज तक कोई संसार की चाल को नहीं रोक सका। फिर आप संतोषी जीव ठहरे। मैं संतोष का अर्थ मृत्यु समझता हूँ। असंतोष ही मानव-जीवन की प्रगति है।” प्रकाश बाबू ने कहा।

“आपकी दृष्टि मानव-जीवन के जिस पहलू पर पड़ी है प्रकाश बाबू ! उसे मैंने अपनी पुस्तक में व्यक्ति का वह स्वार्थी रूप बतलाया है जिसकी

दशा अथाह पानी में भँवर के समान होती है। उसमें गिरकर व्यक्ति वहीं पर चक्कर लगाने लगता है, उसमें इधर-उधर बढ़ने की क्षमता नहीं रहती। भँवर में फँसकर अनजान व्यक्ति यह भी समझ सकता है कि वह स्वयं उस भँवर का निर्माता है; परन्तु वास्तव में सत्य यह नहीं है। वहाँ व्यक्ति अपनी शक्ति को खोकर उस भँवर का दास बन जाता है। जैसे आप अपनी मनोवृत्ति के दास बन चुके हैं। यह मनोवृत्ति नवीन नहीं, बाबा आदम के समय की मनोवृत्ति है। इसमें प्रगति नहीं, विकास नहीं, प्रवाह नहीं, कला नहीं—एक झूठी और अस्थिर हविस है। यह कभी स्थायी नहीं रह सकती। आपकी विचार-धारा अपनी कमजोरियों पर आवरण डाल कर आज तक औरों के साथ-साथ अपने को धोखा देती चली आ रही है।” कहकर प्रोफेसर सुधांशु ने गम्भीरता पूर्वक प्रकाश बाबू के मुख पर देखा। फिर धीरे-धीरे बोले, “आपके जीवन का कोई पहलू मुझसे छिपा नहीं है।”

यह कहने के पश्चात् उन्होंने अपनी मेज की दराज से कुछ चित्र निकाल कर प्रकाश बाबू के सामने डाल दिये। ये चित्र व्यक्ति की खोपड़ी के थे, जिन पर लाल स्याही से बहुत प्रकार के चिह्न लगे थे। “यह व्यक्ति के मस्तिष्क की स्टडी है। मैंने आपके मस्तिष्क को उस दिन से ही पढ़ना प्रारम्भ कर दिया था जिस दिन प्रथम बार मेरी आपसे भेंट हुई थी; और आज तो मैं दावे के साथ कह सकता हूँ कि आप अपने मस्तिष्क को उतना नहीं समझते जितना मैं समझता हूँ।”

प्रकाश बाबू ने इस बात का कोई उत्तर नहीं दिया। प्रोफेसर सुधांशु को वह मूर्ख नहीं समझ सकते थे, परन्तु उनके मत से सहमत होने का भी उनके पास कोई कारण नहीं था। वह मन-ही-मन मुस्करा कर बोले, ‘किताबों के कीड़े हैं, इन बेचारों को दुनियाँ का क्या पता? इनकी सब बातें क्षम्य हैं। मैं इन्हें दया का पात्र समझता हूँ। बड़े-से-बड़ा विद्वान् क्रय किया जा सकता है। हमारा काम विद्वानों को क्रय करना है और उनका काम हमारे विचारों का प्रतिपादन करना। प्रोफेसर सुधांशु की

लेखनी का चुकता मूल्य देकर यदि एक दिन मैंने इन्हें अपना दास न बना लिया तो मेरा नाम भी प्रकाश नहीं।”

बातों की दिशा बदलते हुए प्रकाश बाबू बोले, “सुना है मिस केतकी ने ग्राजकल डाक्टरी में बहुत प्रसिद्धि प्राप्त करली है।”

“क्यों, क्या भेंट नहीं हुई अभी तक ? मैं तो समझता था कि कल ऐरोड्रम पर उन्होंने आपका स्वागत किया होगा।” बात बहुत सरलता पूर्वक प्रोफेसर सुधांशु ने कही, परन्तु प्रकाश बाबू के हृदय में गुभ गई। उसने एक कसक सी पैदा करदी। यह प्रोफेसर साहब ने वह व्यंग्य-बाण मारा था, परन्तु इन्हें भी एक दिन देखना होगा कि इनका व्यंग्य सत्य होकर ही रहेगा। ऐरोड्रम पर मेरे स्वागत के लिए बेचारी मिस केतकी क्या, न जाने कितनी मिस केतकियाँ आँखें बिछाये खड़ी रहा करेंगी। वह दिन दूर नहीं है जब मैं रुपये पर विजय प्राप्त कर लूँगा। रुपया संसार के सब साधनों को अपना दास बना सकता है।

इसी समय प्रोफेसर सुधांशु खड़े होते हुए बोले, “लो यह आगई मिस केतकी भी।” और फिर मिस केतकी की ओर मुँह करके बोले, “तुम्हारी आयु बहुत बड़ी है मिस केतकी ! अभी एक क्षण भी नहीं हुआ कि प्रकाश बाबू तुम्हारे विषय में ही पूछ रहे थे।”

“मेरे विषय में !” मिस केतकी ने तनिक आश्चर्य के हाव-भाव से प्रकाश बाबू के मुख पर मोहक दृष्टि डालकर कहा।

वह बोलीं, “प्रोफेसर साहब ! दुनियाँ बड़ी विचित्र है। आपने ‘कामायनी’ पढ़ी है। कितने सरल और मधुर भाव से ‘प्रसाद’ जी लिख गये हैं :

‘जिससे हृदय सदा समीप है, वही दूर रहता है।’

“परन्तु यह बात तुम प्रकाश बाबू के लिए नहीं कह सकतीं।” मुस्करा कर सुधांशु बोले, “यहाँ मैं तुम्हारी यह बात नहीं मानूँगा मिस केतकी ! चाहे मुझे ‘प्रसाद’ की कल्पना, भावना और अनुभव तीनों को ही चुनौती क्यों न देनी पड़े।”

“न मानें आप, परन्तु सत्य असत्य नहीं हो सकता।” यह कहकर मिस केतकी ने प्रकाश बाबू पर फिर गहरी चोट की।

अब प्रकाश बाबू मौन न रह सके। हृदय में पीड़ा लेकर बोले, “मिस केतकी ! इसमें आपका दोष नहीं, दोष समय का है। जीवन का सफल कलाकार असफल कलाकारों पर सर्वदा से हँसता चला आया है। परन्तु ये व्यंग्य-बाण मूँह पर न छोड़िए। मैं जरा कमजोर आदमी हूँ। आपकी शक्ति के सम्मुख ठहरना मेरे लिए कठिन है। मैं नतमस्तक होता हूँ आपके सामने।” यह कहकर प्रकाश बाबू ने ऐसा सरल मुँह बनाकर सिर झुकाया कि प्रोफेसर सुधांशु को हँसी आगई।

“खूब व्यंग्य कसा प्रकाश बाबू ने भी। सफल कलाकार की असफल कलाकार पर हँसने वाली प्रवृत्ति बहुत प्राचीन है। परन्तु मिस केतकी के विषय में आपका यह आरोप मैं सहन नहीं कर सकता। संसार में सफल कलाकार असफल कलाकारों को अपने दल में बाँध कर उन्नति के शिखर तक लेजाते हुए भी देखे गये हैं। मिस केतकी को मैं उन्हीं सफल कलाकारों की पंक्ति की पथ-प्रदर्शिका मानता हूँ।” ये शब्द उच्चारण करते हुए प्रोफेसर सुधांशु किसी स्वप्न-लोक की कल्पना में खो गये।

“आपके मानने को मैं अन्तिम निर्णय स्वीकार करने के लिए उद्यत नहीं हूँ। प्रत्यक्ष को प्रमाण की आवश्यकता नहीं ? मैंने आपसे आते ही सर्वप्रथम मिस केतकी के विषय में पूछा। अमेरिका से भी मिस केतकी के नाम पाँच पत्र लिखे। परन्तु मेरे पास इनका एक भी उत्तर नहीं पहुँचा। कल भी जिस समय मेरा जहाज उतर रहा था तो मेरे नेत्र...” कहते कहते प्रकाश बाबू के शब्द रुक गए।

“हाँ हाँ ! रुक क्यों गये ? कहो न ! कि आपके नेत्र मिस केतकी के कपोलों पर अंकित हो जाने के लिए भटक रहे थे और वहाँ आपके स्वागत में खड़ा था यह खूबसूरत प्रोफेसर सुधांशु। परन्तु प्रकाश बाबू यह आप इनसे पूछ सकते हैं कि मैंने इन्हें वहाँ पहुँचने से नहीं रोका।”

“आपके उलाहने के लिए मैं क्षमा-याचना करती हूँ प्रकाश बाबू ! परन्तु ज्यों ही मैं आपके स्वागत के लिए चलने को तय्यार हुई त्यों ही एक बहुत ही गम्भीर रोगी दवाखाने में आगया । यदि मैं उसे छोड़ देती तो एक जच्चा और उसके बच्चे को प्राणों से हाथ धोने पड़ते । आपरेशन करके बच्चा निकालना पड़ा ।”

“सुना आपने प्रोफेसर साहब ! देखा हमारा मूल्यांकन ? दो चार सौ रुपया फीस…………”

प्रकाश बाबू अभी पूरी बात कहने भी न पाये थे कि मिस केतकी तिलमिला कर बोली, “यही है आपके विचारों का माप-दण्ड ? आपके जीवन में पैसे का मूल्य इतना अधिक हो चुका है कि आपकी आत्मा उसके नीचे दब गई है । मैं आपको यह भी बतलादूँ कि उस रोगी से मैंने एक पैसा भी फीस नहीं ली । श्रौषधि भी अपने पास से ही दीं ।”

“तुमने मानवता को कलंकित होने से बचा लिया मिस केतकी !” और फिर प्रकाश बाबू से बोले, “मिस केतकी इन्हीं कामों के कारण मेरी श्रद्धा की पात्री हैं । इसी को मैं असफल कलाकार का हाथ पकड़ कर सफल कलाकार को अपने साथ उन्नति के पथ पर ले जाना कहता हूँ । मिस केतकी के दृष्टिकोण का मानवीयकरण हो चुका है । मिस केतकी ने अपने व्यवसाय को सिद्धान्त रूप से अपनाया है । स्वार्थ-सिद्धि को आधार मानकर यह जीवन-पथ पर अग्रसर नहीं हुई हैं, बल्कि मानव-मात्र के हित में अपना हित मिला देने की कल्पना की है ।”

“बस रहने दीजिए इन सिद्धान्तों की बौद्धारों को ।” चिढ़ कर प्रकाश बाबू तनिक खीजते हुए बोले, “मिस केतकी की प्रशंसा करके आप जिस लक्ष्य की ओर अग्रसर होना चाहते हैं वह मुझसे छिपा नहीं हैं । ऐसे सिद्धान्त मैं न जाने कितने पढ़ चुका हूँ; परन्तु जो जीवन का अटल सत्य है उसकी अवहेलना करके चलने वालों को मैं मूर्खों की श्रेणी में गिनता हूँ । जीवन में आने वाले अवसर का पूरा-पूरा लाभ न उठाना, आवृकता में बह जाना, अथवा अपनी दुर्बलता को मानवता का

आवरण देकर बड़प्पन में फूलकर कुप्पा हो जाना, यह धोखा है प्रोफेसर सुधांशु ? मैं वस्तु की जड़ को पकड़ता हूं, भले ही वह सूखी क्यों न हो ? दूब की जड़ें बास वर्ष तक चिड़िया के घोंसले में रखी रहने के पश्चात् भी हरी ही रहती हैं। आपकी दृष्टि पहुँचती है लाल-लाल कोपलों पर। मैं जड़ों पर अधिकार प्राप्त करना चाहता हूं, बला से उनकी कोपलें झुलस ही क्यों न गई हों। मरने वाला मरता रहेगा, जीने वाला जियेगा, परन्तु यदि मिस केतकी अमेरिका में मुझसे मिलने आई होती तो...

“तो.....अच्छा रहने दीजिए अब इन बातों को। विषय व्यर्थ के लिए बहुत गम्भीर हो उठा है। इतने दिन पश्चात् आज भेंट हो रही है और उसमें भी यह व्यर्थ का तनाव बीच में आगया।” प्रोफेसर सुधांशु बोले।

“तनाव की आप चिंता न करें प्रोफेसर साहब ! प्रकाश बाबू की यह पुरानी बान है। घाव करने और फिर उस पर नमक छिड़कने में यह बहुत प्रवीण हैं। इसमें इन्हें आनन्द आता है।” मिस केतकी प्रकाश बाबू पर वक्र दृष्टि डाल कर बोलीं।

“यही बात है मिस केतकी ! उल्टा चोर कीतवाल को डाँट रहा है। हृदय की छलनी बनाकर भी आप चाहती हैं कि उसमें से एक बूंद रक्त न गिरे। विचित्र उपहास है, परन्तु कीजिए आप जो करना चाहें, स्वतंत्रता जो दे चुका हूँ आपको।” कहकर प्रकाश बाबू गम्भीर हो उठे।

“कितना मिठास है आप दोनों की बातों में। कभी-कभी जब मैं इस पर विचार करता हूँ तो मिठास और कटुता का वह सम्मिश्रण सामने आता है जिसके स्वाद की परख करना मेरे लिए असम्भव हो उठता है। दोनों के नेत्रों की मधुर मुस्कराहट पर जब हलकी-हल्की व्यंग्य और झूठे क्रोध की रेखाएँ नृत्य करती हैं तो ऐसा प्रतीत होता है कि मानो सरिता की स्वच्छन्द प्रवाहित होने वाली धाराएँ मन्द मलय-समीरण के प्यार भरे हलके थपेड़ों से तरंगित हो उठी हैं। भाग भरे निर्भर की मद-भरी इठलाती हुई पतली-पतली धाराओं के समान दोनों के बदन

का स्नायु-जाल भङ्कृत हो उठा है और हतंत्री बजने लगी है। फिर मैं सोचता हूँ कि यदि यही बात है तो इतना सब कुछ प्रदर्शन क्यों? क्या मुझे दिखलाने के लिए?" कह कर प्रोफेसर सुधांशु इस प्रकार चुप हो गए मानो अथाह सागर में कुछ खोजने के लिए डुबकी लगाई हो।

मिस केतकी मुस्करा रही थीं। परन्तु प्रकाश बाबू को इस उपहास में मिठास की अपेक्षा कड़वाहट अधिक प्रतीत हुई। उनके मन में आया कि वह प्रोफेसर सुधांशु को फटकार दें, परन्तु उन्होंने ऐसा नहीं किया। मन में सोचा, क्या लाभ? जब लाभ नहीं, तो कह कर हल्के भी क्यों बनें? स्त्री-जीवन की आवश्यकता अवश्य है, परन्तु इसकी पूर्ति भी पैसे से की जा सकती है। तराजू के एक पलड़े पर रुपया रखकर दूसरे पर संसार की जो वस्तु भी चाहो रखा सकते हैं। केतकी की कृपा-कोर पर न्योछावर होने वाले प्रोफेसर सुधांशु जीवन में हल्के हो सकते हैं, स्त्री के चरणों पर अपनी श्रद्धा के पुष्प चढ़ा सकते हैं, अपनी पलकें बिछा सकते हैं, ललचाये हुए नेत्रों से इनके मुख-मण्डल की छवि निहार सकते हैं, परन्तु मैं यह सब कुछ नहीं कर सकता।

स्त्री मेरे जीवन का लक्ष्य नहीं बन सकती। विचारते-विचारते प्रकाश बाबू को सूफियों की नारी के प्रेम में ईश्वर की कल्पना करने वाली भावना का स्मरण हो आया। वह बैठे-बैठे एक दम मलिक मोहम्मद जायसी जैसे सूफी कवियों को मूर्ख समझ कर जोर से ठहाका मार कर हँस पड़े।

“आपके हँसने का कारण मैं समझ गई।” गम्भीर मुख-मुद्रा बनाकर मिस केतकी ने कहा, “आपकी मुखाकृति को पढ़ लेना मैंने सीखा है। आपकी हँसी में नारी के उपहास की रूपरेखा झाँक रही है। मैंने डाक्ट्री पास की है प्रकाश बाबू! आपको सम्भवतः ज्ञात नहीं है कि मैं आज तक कई सौ खोपड़ियाँ चीर-चीर कर देख चुकी हूँ। उनकी बनावट का ज्ञान प्राप्त करना और फिर उस बनावट वाले मरीजों की खोपड़ी से उनका मिलान करते हुए उनके मुख पर आने वाले हाव-भावों

को परखना ही आजकल मेरी खोज का प्रधान विषय है। मस्तक की सलवटें देखकर मैं रोग पहचान लेती हूँ।”

“दोनों ही पत्थर की शिला बन गये। मैं समझ ही नहीं पा रहा हूँ कि आप दोनों के गम्भीर्य को किस प्रकार तोड़ूँ ?”

“नहीं समझ पा रहे हैं तो सुनिए, मैं समझाती हूँ उपाय” यह कहते हुए मिस केतकी ने अपने बैग से संध्या की ‘वेंगर्स’, में होने वाली पार्टी के निमन्त्रण-पत्र निकाल कर मेज पर रख दिये।

पार्टी प्रकाश बाबू के स्वागत में डाक्टर केतकी द्वारा दी गई थी। निमन्त्रण-पत्र देखकर प्रकाश बाबू के मुख पर हल्की सी हँसी की लहर दौड़ गई और प्रोफेसर सुधांशु तथा डाक्टर केतकी के नेत्रों ने भी उसे मधुरामृत मान कर पी लिया।

“परन्तु यदि संध्या को भी डाक्टर केतकी के मार्ग में कोई जच्चा-बच्चा आ टपके, तब क्या होगा प्रोफेसर सुधांशु ?”

“तब मेरा दावत में आना नहीं हो सकेगा।” नेत्र ऊँचे करके मिस केतकी ने कहा। “कहिए स्वीकार है निमन्त्रण ?”

प्रकाश बाबू ने स्वीकृति ने दे दी।

: २ :

दावत में लगभग पच्चीस सज्जन निमंत्रित थे, परन्तु पुण्डरीकर, कविवर ‘शून्य’ जी, नियाज अहमद, रानी सुशीला कुमारी, सरदार लुहारा सिंह, सेठ पोद्दार, प्रकाश बाबू तथा प्रोफेसर सुधांशु इनमें विशेष थे।

“समाज जुड़ गया परन्तु कविता नहीं आई।” कहते हुए अपने अस्त-व्यस्त बालों में बाँधे हाथ की चारों ऊँगलियाँ डालकर उन्हें एक ओर को कुलकाते हुए कविवर शून्य जी बोले।

“आपका इशारा शायद मिस केतकी की ओर है। मैं शायरी नहीं

जानता, परन्तु शायरों का साथ अवश्य किया है मैंने भी।” पास में बैठे नियाज अहमद बोले।

“बनने का प्रयत्न न कीजिए नियाज साहब ! मैंने सुनी है आपकी शायरी। आपकी भावना ने ही आपके हृदय को कर्मचारियों के जीवन से जकड़ कर बाँध दिया है। आपके हृदय, मस्तिष्क और कंठ की कविता कार्यरूप में साकार होकर बह निकली है।” पास बैठी सुशीला बोली।

नियाज अहमद, “यह तो प्रोफेसर सुधांशु की इनायत है सुशीला रानी ! उन्होंने मेरी कल्पना पर हथौड़े की चोट मार कर एक दिन कहा—मूर्ख ! हथौड़ा सँभाल। कलम एक ओर रख दे। और जब मैं हथौड़ा सँभालने लगा तो उन्होंने एक कसकर तमाचा मेरे गाल पर मारा। मेरी आँखें खुल गईं। वह बोले—तुम्हारा कलम ही तुम्हारा हथौड़ा है। इसकी शक्ति से तुम न जाने कितने हथौड़े चलवा सकते हो।”

“हथौड़ा और लेखनी ! मूर्ख ! नितांत मूर्ख। कहाँ लेखनी और कहाँ हथौड़ा। यह कह कर आपने कविता का अपमान किया है। मैं कहता हूँ वीणा रो पड़ेगी जब उसे यह पता चलेगा कि उसके तारों पर खेलने के लिए हथौड़े से लिखे हुए राग सधने आ रहे हैं। तबले पर यदि एक भी हथौड़े का प्रहार हो गया तो बस.....”

नियाज अहमद और सुशीला रानी यह सुनकर मुस्करा दिये। एक मेज पर ये तीनों व्यक्ति बैठे बातें कर रहे थे। दूसरी पर बैरिस्टर पुण्डरीकर, सेठ पोद्दार और सरदार लुहारसिंह बैठे गप्पें लगा रहे थे।

“भारत का भविष्य बहुत उज्ज्वल है सरदार लुहारा सिंह ! प्रकाश बाबू जैसे योग्य व्यक्तियों के संकेत पर देश की उन्नति की रूप-रेखाएँ बनेंगी। कमाल का प्लानिंग है इस व्यक्ति का। जो-जो स्कीमें इन्होंने मुझे अमेरिका से आकर सुनाई हैं उनके फलीभूत होने पर देश स्वर्ग बन जायगा है। बेरोजगारी देश में रह ही नहीं सकती। प्रत्येक व्यक्ति के पास सवारी को एक कार, संगीत सुनने को एक रेडियो और ऐश के सब सामान होंगे।” पुण्डरीकर बोले।

“परन्तु स्पष्टवादिता का अर्थ तुमने सम्बन्ध विच्छेद हो जाना कैसे लगा लिया ?” प्रोफेसर सुधांशु ने पूछा ।

मिस केतकी, “मेरा यह विचार केवल विचारों पर ही आधारित नहीं है, अनुभवों पर आधारित है प्रोफेसर साहब ! आपको मैं इसमें अपवाद स्वरूप ग्रहण करती हूँ । प्रकाश बाबू को ही आप देख लीजिए उनका मस्तिष्क सर्वदा वक्र-गति से चलता है । इसमें उनका दोष भी मैं नहीं मानती । मस्तिष्क को वह वक्र-गति से चलाते हैं, यह मैं मानने को उद्यत नहीं । जिसके मस्तिष्क का स्वाभाविक विकास जिस दिशा में है उसपर प्रतिबन्ध नहीं लगाया जा सकता । आपकी विचार-धारा भी इसी प्रकार स्वतंत्र है । मैं अपना सम्बन्ध इन विचार-धाराओं के झमेले से ऊपर उठाकर केवल मानव और मानव के प्रति अपने कर्तव्य तक ही सीमित कर देना चाहती हूँ । परन्तु आप लोग करने दें, तब तो । आपके तो वाद-विवाद ही समाप्त नहीं होते । फिर आपसे तो वाद-विवाद करके भी तनिक मन हलका कर लेती हूँ, परन्तु प्रकाश बाबू आजकल एक ऐसे स्थिर जलाशय बनते जा रहे हैं कि जिसमें डेला फेंक कर मारो तो अनेकों मेढकों के समान डेला भी उसके गर्त में समा जाते हैं । उससे घरातल पर लहरें उठती ही नहीं । उनकी पाचन-शक्ति आजकल बहुत बढ़ गई है ।”

प्रोफेसर सुधांशु मुस्कराते-मुस्कराते एक दम जोर से हँस पड़े और उनका स्वर पूरे कमरे में छा गया । फिर धीरे से अपने को सँभालते हुए बोले, “जिस शक्ति को तुमने ‘पाचन-शक्ति’ कहा है मैं उसे ‘विनाशक-शक्ति’ कहता हूँ केतकी ! यही मेरा तुम्हारा मतभेद है । ‘पाचन’ को मैं बुरा नहीं मानता और उससे समाज तथा राष्ट्र में बल आता है, परन्तु ‘विनाशक-शक्ति’ उत्पादक नहीं हो सकती और तो शक्ति उत्पादक नहीं है, वह समाज और राष्ट्र को कभी उन्नति की ओर नहीं लेजा सकती । प्रकाश बाबू अपनी जिस शक्ति के द्वारा राष्ट्र में समानता प्रतिपादित करने के लिए प्रयत्नशील हैं, जानती हो उसके फलस्वरूप क्या होगा ?”

“जानती हूं.....।”

मिस केतकी कुछ और कहने जा रही थीं कि तभी नियाज अहमद आ गये। बातों की दिशा बदल गई। उन्होंने मुस्कराते हुए सूचना दी, “आपने कुछ सुना प्रोफेसर साहब !”

“क्या ? मैंने तो कुछ नहीं सुना।” जानने की उत्सुकता लेकर प्रोफेसर साहब ने नियाज अहमद के मुख पर देखा। मिस केतकी के भी कान नियाज अहमद के मुख से निकलने वाले शब्दों को सुनने के लिए उत्कंठित हो उठे।

“प्रकाश बाबू ने चांदनी चौक में सर्राफ़े के सामने, ऊपर की मंजिल में, मोती बाजार के दाईं ओर पच्चीस हजार रुपया पगड़ी देकर एक दफ़्तर ले लिया है। शानदार दफ़्तर है। प्रकाश बाबू कल कह रहे थे कि पच्चीस हजार पगड़ी का दिया और अब पच्चीस हजार रुपया उसकी सजावट पर व्यय करेंगे। इस दफ़्तर का प्रत्येक कार्य विद्युत-गति से संचालित होगा।

“दफ़्तर कब लिया प्रकाश बाबू ने ?” मिस केतकी ने पूछा।

“कल संध्या को।”

“देखा आपने प्रोफेसर साहब ! मैंने कहा था न आपसे कि प्रकाश बाबू बहुत शीघ्र कोई बड़ा कार्य करने वाले हैं।” हृदय में प्रसन्नता के भाव लेकर मिस केतकी ने कहा। मिस केतकी के मन में आशा की रंगीन लहर दौड़ गई।

“बड़ा कार्य करने वाले हैं, तो क्या हुआ ? किसी भी कार्य का बड़ा होना उस कार्य की महानता का द्योतक नहीं हो सकता। अजगर साँप कितना बड़ा होता है, परन्तु उससे संसार आज तक कुछ लाभ नहीं उठा सका। उल्टा वही सामने आने वाली वस्तुओं को निगल जाता है।”

“खूब कहा आपने प्रोफेसर साहब ! बहुत खूब। दरअसल ठीक कहा। प्रकाश बाबू से जब कभी भी मेरी बातें हुई हैं तो मैंने उनके विचारों में अजगर की फुँकार को छिपा पाया है। वह जब किसी से

बातें करते हैं तो उसकी शक्ति को अपने में सोख लेने के लिए लपक कर उसपर हमला करने का प्रयत्न करते हैं ।”

“आपका अनुमान ठीक है । परन्तु जो कुछ आप कह रहे हैं, ये सभी बातें प्रोफेसर सुधाशु में प्रकाश बाबू से किसी प्रकार कम नहीं, बल्कि अधिक ही हैं; यह मैं स्पष्टता पूर्वक कह सकती हूँ ।” कहने के पश्चात् मिस केतकी ने अपनी बात का समर्थन स्वयं प्रोफेसर सुधाशु से चाहा ।

“मेरे विचार से इस समय इस विषय पर यदि हम बात-चीत बन्द कर दें तो अच्छा रहेगा । तुम्हें एक सूचना देना चाहता था मिस केतकी ! परन्तु अभी भी डर रहा हूँ कि पता नहीं तुम उसका स्वागत करोगी या..... ।”

“वह सूचना देने की आपको आवश्यकता नहीं है ।”

“तब क्या तुम्हें मिल चुकी है वह सूचना ?”

“हाँ ! मैं आपके त्याग का स्वागत करती हूँ और आपको विश्वास दिलाती हूँ कि मेरा और मेरी सुविधाओं का पूर्ण सहयोग आपको प्राप्त रहेगा । इससे अधिक मेरे पास और कुछ नहीं है कहने को !”

“मैं डर रहा था कि मिस केतकी कहीं मुझ पर ‘संकुचित-बुद्धि’ का लेबिल लगाकर फटकारें न डालने लगे । तुम्हारे स्वागत का बल पाकर मैं अपने स्वप्न को फलीभूत करने में सफल होऊँगा । नियाज अहमद जैसे निस्वार्थ कार्यकर्त्ताओं और कुमारी सुशीला रानी जैसी देश-प्रेम की भावना से ओत-प्रोत महिलाओं का सहयोग मेरी योजना में चमत्कार उत्पन्न कर देगा । जीवन का वह सुख-स्वप्न जिसमें सहयोग के लिए स्थान है, शोषण के लिए नहीं, साकार हो उठेगा । मेरे उस साकार सुख-स्वप्न को और भी रंगीन तथा भावनामय बनाने में मुझे कविवर ‘शून्य’ जी का सहयोग प्राप्त होगा । उनकी कविता मेरे निर्माण किये हुए समाज के जीवन में सरसता का संचार करेगी, उत्साह और आशाओं के पुष्प खिलायेगी, प्रेम और सद्भावना की जागृति प्रदान करेगी, शांति और सुख का साम्राज्य स्थापित होगा । उस समाज में बुद्धि और शारी-

रिक शक्ति का संघर्ष न होकर दोनों के पारस्परिक सहयोग की भावना जागृत हो उठेगी ।”

इसी समय कविवर ‘शून्य’ जी एक पर्चा हाथ में लिए भूमते हुए सामने आकर, बिना यह देखे और देखने की आवश्यकता समझे कि वहाँ क्या हो रहा था, कौन-कौन बैठे थे और किस विषय पर बातें चल रही थीं, बोले, “प्रोफेसर साहब ! देखिए क्या लिख दिया आज लेखनी ने ? कौंसी सजीव निर्माण की भावना कल्पना की तूलिका ने चित्रित की है ।” और बिना यह प्रतीक्षा किये कि कोई सुनना चाहता है अथवा नहीं, कविता सुनानी प्रारम्भ कर दी :

यह नये निर्माण का युग ।

गत पुरातन रूढ़ियों का

आ गया अवसान का युग ।

यह नये निर्माण का युग ।

द्वेष का अवसान समीप है ।

सहयोग के नव वृन्त कुसुमित हो चले ।

जल उठा वह नव-प्रगति का दीप है,

शिखा पर जिसकी शलभ हँस-हँस जले ।

आज श्रम-जीवी ! तुम्हारे

आ गया उत्थान का युग ।

यह नये निर्माण का युग ।

“खूब कहा आपने ‘शून्य’ जी ! कमाल कर दिया । क्या दाद दूँ आपके कलाम की ? जान फूँक दी है आपने अपनी शायरी में । प्रोफेसर सुधांशु के विचारों की दुनियाँ का शानदार नक्शा तय्यार कर दिया आपने ।” नियाज अह्यद बोले ।

प्रोफेसर सुधांशु ने कविवर ‘शून्य’ जी का स्वागत किया । मिस केतकी कविता की प्रथम पंक्ति को गुन-गुना रही थीं । उन्होंने कई बार हीठों

ही होठों में कहा—यह नये निर्माण का युग—वास्तव में आज समाज और सभ्यता के नव-निर्माण का युग आ गया है। पुराने स्वरो को अलापने वाला संसार की प्रगति की दौड़ में पछड़ जायगा। और वह स्वाभाविक गम्भीरता पूर्वक बोलीं, “तुमने जिस प्रगति का संकेत अपनी कविता में किया है, वह वास्तव में सराहनीय है। मैंने कल प्रोफेसर सुधांशु से यही कहा था कि आगामी युग का नामकरण हमें श्रमजीवी-युग करना होगा। भविष्य में जीवन की असमानताएँ भाग्य को दोषी ठहरा कर समाज में सहन नहीं की जा सकतीं। संसार का जो राष्ट्र अपने मस्तक से यह असमानता का काला धब्बा धोकर साफ नहीं करेगा वह उच्च-वर्ग के राष्ट्रों की सभा में अपना प्रतिनिधि भेजने का अधिकारी नहीं गिना जायगा।”

“कवि के प्रगति-सन्देश का मैं हृदय से स्वागत करता हूँ, परन्तु यह प्रगति नेत्र बन्द करके किसी के पीछे भागने और छलांग लगाने वाली नहीं होनी चाहिए। हमें आगे अवश्य बढ़ना है, परन्तु अपनी शक्ति के बल पर। हमें औरों का सहयोग भी प्राप्त करना है, परन्तु अपनी स्वतंत्रता और अपने आत्म-सम्मान तथा संस्कृति का बलिदान देकर नहीं। हमें अपनी परिस्थितियों के अनुसार अपना प्रगति-पथ स्वयं निर्धारित करना है। मार्ग में आने वाले बवंडरों के सम्मुख सीना खोलकर संघर्ष करते हुए पग आगे बढ़ाना है……।”

“यही तो है मेरी कविता की आत्मा प्रोफेसर साहब ! मैं सच कहता हूँ कि यदि आप जैसे दो चार भी मेरी कविता की सूक्ष्म-भावनाओं को परखने वाले मिल जायें तो मुझे नोबिल पुरस्कार मिल सकता है। मेरी कविता की एक-एक कल्पना में न जाने कितने संसार नित्य बनते और बिगड़ते हैं। परन्तु जाने दीजिये नोबिल पुरस्कार को। पुरस्कारों के पीछे दौड़ना बच्चों का काम है। हमारा कर्तव्य है संसार को प्रगति और कल्याण का सन्देश देना।” इतना कहकर ‘शून्य’ जी अपने अस्त-व्यस्त सूखे बालों में उँगलियाँ घुमाते हुए मंत्र-मुग्ध हो गये।

“क्या दाद दी जाय आपकी दरियादिली और नाजुक खयाली की ‘शून्य’ जी ! नोबिल पुरस्कार आपकी दृष्टि में नाचीज़ है, और उसके पीछे दौड़ना व्यर्थ है। आपके पास शायरी का हुनर है, जिसका मान करने वाले प्रोफेसर सुधांशु जैसे पारखी हैं जो कविता को पैसे पर न तोल कर उसकी भावना और कल्पना पर तोलते हैं। मैं उम्मीद करता हूँ कि एक दिन वह अवश्य आयेगा जब आपकी शायरी भारत के हर इन्सान की ज़बान पर नाच उठेगी।”

“मेरी कविता भारत-राष्ट्र की जन-वाणी बन जाये, यही मेरी महत्वाकांक्षा है। परन्तु कभी-कभी जब मेरी लेखनी अधिक भावुक हो उठती है, हृदय सरसता से छलछला उठता है, तो मैं शृंगार की कविता लिखने पर विवश हो जाता हूँ। पता नहीं मिस केतकी ! आप मेरी उन कविताओं को मेरे जीवन का हलकापन, पगलापन या भोलापन कहती हैं या कोरी मूर्खता मान बैठती हैं।” कह कर ‘शून्य’ जी ने मिस केतकी के मुख पर स्वाभाविक सरलता से देखा।

प्रोफेसर सुधांशु के मुख पर मुस्कान खेल रही थी और नियाज़ अहमद टकटकी लगाये मिस केतकी के होठों की धिरकन को परखने का प्रयत्न कर रहे थे। कविवर ‘शून्य’ जी का इस प्रकार विषय बदल कर मिस केतकी से सीधा प्रश्न कर बैठना आज कोई नई बात नहीं थी, परन्तु फिर भी वह एक क्षण के लिए सकपका सी गई।

मिस केतकी अपने को सँभाल कर मुस्कराती हुई बोलीं, “आपको मूर्ख समझने और कहने की घृष्टता कोई मूर्ख व्यक्ति ही कर सकता है। क्या आप केतकी की गिनती मूर्खों की श्रेणी में किये बैठे हैं ?”

“बात यह नहीं है मिस केतकी ! परन्तु भावुकता के उद्रेक में कवि स्वयं मूर्ख बन जाता है। वह अपने बचपन को लौटाकर उसके भोलेपन का प्रयोग भावना की सफलता के लिए करता है। उस परिस्थिति में उसकी कोमल-कल्पनाओं पर थोड़ा सा भी आघात हो जाने से उसकी बीणा के तार टूट जाते हैं और स्वर बिखरने लगते हैं। प्यार से सँजोई

हुई मधुर-स्मृतियों के रंगीन खिलौने टक-टक करके कठोर भूमि पर गिर पड़ते हैं और टूट-फूट कर चकनाचूर हो जाते हैं।” कहते-कहते ‘शून्य’ जी रुक गये और सब ने देखा कि उनके नेत्रों से टप-टप आँसू की बूँदें भर रही थी।

“नारी की हृदय-हीनता से टकराकर रो रहे हो कवि !” मिस केतकी ने पूछा।

“नारी की हृदय-हीनता से टकराकर नहीं रो रहा हूँ, मैं रो रहा हूँ अपनी कविता की आशक्तता पर।”

“परन्तु इस अशक्तता ने ही तो तुम्हें सशक्त बनाया है कवि ! तुम्हारे जीवन की इसी टक्कर ने तुम्हें प्रगति की प्रेरणा दी है।” और इतना कहकर सुधांशु कवि की झुकी गर्दन अपनी दो उँगलियाँ उसकी ठोड़ी के नीचे लगा कर ऊपर उठाते हुए बोले, “अभी घाव नया ही तो है, इसीलिए दुख जाता है। घाव पर घाव खाते हुए जब जीवन-पथ पर अग्रसर होंगे तो कविता मँजकर अपने में कसक और टीस का साम्राज्य स्थापित करेगी। अभी घाव हरा है, उस पर पपड़ी जमने दो, घाव भरने दो, दर्द मिटने दो और उसे चिन्ह बन जाने दो स्मृति की रेखाओं का, जिसे देखकर तुम मुस्कराओ, कविता फूट पड़े और स्वर बह निकलें। जब यह सब कर सकोगे तब मैं समझूँगा कि मेरा कवि आज विजयी होकर आया है।”

कविवर ‘शून्य’ जी बिला बैठे ही विजयी होकर लौटने की प्रतिज्ञा करके चले गये। मिस केतकी ने बैठने का बहुत आग्रह किया परन्तु ‘शून्य’ जी नहीं बंटे।

मिस केतकी का भी चिकित्सालय जाने का समय हो गया था। उन्होंने भी प्रोफेसर साहब तथा नियाज़ अहमद से विदा ली।

: ४ :

सुशीला कुमारी के हृदय में कविवर 'शून्य' की कविता ऐसी बस गई थी कि उसे निकालने का प्रयास करने पर भी वह उसमें सफल नहीं हो पाती थी। प्रकाश बाबू के रंगीन स्वप्न कवि की कल्पना पर विजय प्राप्त कर चुके थे, परन्तु कवि और उसकी कविता की मीठी-मीठी कसक आप-ही-आप कभी-कभी उसके हृदय-तंत्री के तारों को झकृत कर देती थी। एकान्त में बैठे-बैठे यों ही उसका जीवन कुछ बज सा उठता था और कानों में ऐसा प्रतीत होता था कि मानो कोई मधुर रागिनी अलाप कर उसके निष्ठुर-व्यवहार पर स्नेह-भरे आँसू ढुलका रहा था। उसके कानों में टप-टप आँसुओं के भूमि पर गिरने की आवाज़ आती थी।

वह सुनती थी कवि की आवाज़—रानी ! तूने मेरा जीवन ही बदल दिया। प्यार प्रदान करने से पूर्व ही यदि तुझे इस प्रकार प्यार से उद्धृण हो जाना था तो प्यार की झाँकी ही क्यों दिखलाई ? तू जिस मृग-तृष्णा के पीछे पगली बनी, नेत्र बन्द किये, लपक रही है, वहाँ तुझे शांति नहीं मिल सकेगी। परन्तु यदि तूने निश्चय ही कर लिया है तो मैं स्वार्थी बनकर तेरा निश्चय बदलना नहीं चाहूँगा। तू यदि अपना मार्ग स्वयं निर्धारित करना चाहती है, तो कर, मैं तेरे मार्ग से हट जाता हूँ।

परन्तु कहाँ ? हट कर भी कवि ! तुम हृदय से हटने का नाम नहीं लेते—सुशीला ने धीरे से एकान्त में कहा—मैं जितना तुमसे दूर भागने का प्रयत्न करती हूँ उतने ही तुम मुझे जकड़ते चने जा रहे हो। तुम मुझे सताना चाहते हो, यह मैं विश्वास नहीं कर सकती, परन्तु सताई मैं अवश्य जा रही हूँ।

कुमारी सुशीला के जीवन में भावुकता का प्राधान्य होने से किसी भी नवीनता की ओर उसका फिसल जाना हर समय सम्भव था। यही कारण था कि प्रोफेसर सुधाशु ने उसे योग्य और कर्मठ मान कर भी कभी अपने किसी ठोस कार्य-क्रम की रूप रेखा में स्थान नहीं दिया।

कविवर 'शून्य' जी ने उसे अपनी कल्पना की देवी मानकर कविता

की आधार-शिला बनाया था। अब आधार-शिला के डाँवा-डोल होने पर कल्पना का सुदृढ़ दुर्ग ढह जाने की सम्भावना प्रतीत होने लगी। परन्तु ज्यों-ज्यों दुर्ग ढहना प्रारम्भ हुआ त्यों-त्यों हृदय-तंत्री के तार भ्रन-झनाये और वीणा अनेकों स्वरों में मुखरित हो उठी। कहते हैं कवि टूटे हृदय की पुकार को ही कविता का सच्चा स्वरूप तानता है। कवि के हृदय में व्यापक वेदना ने जन्म लिया और लेनिन का व्यापक नियम—कर्मचारीवर्ग में ज्यों-ज्यों भूख, प्यास और गरीबी बढ़ेगी त्यों-त्यों क्रांति का द्वार उन्मुक्त होगा—के अनुसार और 'शून्य' जी क्रांति के अग्रदूत बन कर शृंगार से राष्ट्र-उत्थान की ओर अग्रसर होकर देश के कर्णधार की कल्पनाओं से ओत-प्रोत एक नई दुनियाँ में विचरण करने लगे।

रानी सुशीला ने जब प्रकाश बाबू से उनकी अमेरिका-यात्रा के अनुभव सुने, और उनके भविष्य की रूप-रेखा पर गम्भीर दृष्टि से विचार किया, तो उसे भारत के प्रांगण में स्वर्ग उतरा हुआ दिखलाई दिया।

“सुख का ही नाम तो स्वर्ग है।” प्रकाश बाबू ने गम्भीरता पूर्वक कहा। सुख की स्थापना प्रोफेसर सुधांशु भी करना चाहते हैं और सुख की स्थापना मैं भी करना चाहता हूँ। लक्ष्य दोनों का एक ही है, मार्ग में अन्तर है। वह पुरानी बैलगाड़ी पर बैठकर ऊँघते हुए उस लक्ष्य की ओर अग्रसर होना चाहते हैं और मैं वायु-यान की सवारी करना उचित समझता हूँ। बतलाओ रानी ! तुम किसके साथ यात्रा करोगी ? इसमें संकोच करने से काम नहीं चलेगा। तुम जो कुछ भी उत्तर दो, वह बहुत स्पष्ट होना चाहिए।”

“जो जीवन में उन्नति की अधिक-से-अधिक सुविधाएँ मुझे प्रदान कर सकेगा, मुझे उसके साथ चलना है।” सुशीला ने गम्भीरता पूर्वक, संकोच त्याग कर, कहा।

“तब ठीक है। तुम उस पागल कवि का साथ छोड़ दो। उसको मैं मूर्ख समझता हूँ। जब और लोग अज्ञानी होते थे, तब दो चार अक्षर सीख कर गा-बजा लेने वाले कवि को ज्ञानी मान लिया जाता था। आज

के युग में जब सत्य कवि की कल्पना की उड़ानों से कहीं ऊँचा उड़ चुका है तो मैं नहीं समझता कि उस झूठ से अपना पल्ला बाँधकर व्यर्थ के लिए जीवन भर रगड़ते रहने में कोई लाभ है ? उसके साथ रहकर तुम्हारा यह सौंदर्य चार दिन के अन्दर धूल में मिल जायगा ।

अपने सौंदर्य की कल्पना नेत्रों के सम्मुख आते ही सुशीला कुमारी झूमकर इठलाती हुई आइने के सम्मुख खड़ी हो गई । प्रकाश बाबू भी वहाँ से उठकर सुशीला के पास जा खड़े हुए और धीरे-धीरे गम्भीर स्वर में बोले, “इतने यत्न से सँजोये और परमात्मा की विशेष कृपा से प्राप्त किये यौवन को इस प्रकार नष्ट कर देना बुद्धिमानी नहीं है । आज का दिन कल और कल का दिन परसों नहीं आयेगा रानी ! कवि और गायक मैं तुम्हारे लिए जितने चाहोगी खरीद कर ला दूँगा ।”

कवि और गायक खरीदा जा सकता है परन्तु पैसा नहीं खरीदा जा सकता—रानी सुशीला के मन में विचार आया ।

प्रकाश बाबू ने धीरे से बार-बार उड़कर सुशीला की कुन्तल को कपोलों से टकराते हुए रोक कर कहा, “हाँ, कह दो रानी ! मैं नहीं चाहता कि तुम व्यर्थ की भावुकता में पड़कर जीवन की यौवन-कलिका को अपने ही हाथों से कुचल डालो । एक दिन की नादानी पर जीवन भर हाथ मलते हुए व्यक्ति मैंने कम नहीं देखे हैं । मैं व्यापारी हूँ और जीवन में वह खेल खेलने जा रहा हूँ जिसके एक-एक दाव पर करोड़ों के वारे-न्यारे होंगे ।”

प्यार और चमत्कार के जादू पर धन का रंगीन आवरण चढ़ाकर प्रकाश बाबू ने कुमारी सुशीला के मन को लुभा लिया और रानी सुशीला ने प्रकाश बाबू के प्रेम-प्रस्ताव पर मौन हस्ताक्षर कर दिये ।

एक दिन कविवर ‘शून्य’ जी के देखते-देखते यह विवाह सम्पन्न हो गया । सुशीला महलों की रानी बन गई । उसके जीवन का रंग, रूप बदल गया । जो सुशीला कल तक कर्मचारियों के प्रत्येक प्रस्ताव की समर्थक थी, उसे आज उनके हर प्रस्ताव में स्वार्थ की गंध आने

लगी। प्रकाश बाबू उसके भाग्य-निर्माता के रूप में उसे दिखलाई देने लगे और मजदूरों के भाग्य को कोरी कापी पर स्याह-सफेद कुछ भी लिखदे ने का उसे अधिकार मिल गया। प्रकाश बाबू की जो बातें उसे कल तक अमानुषिक प्रतीत होती थीं, वे आज नीतियुक्त और राष्ट्र-हित की गूढ़ विचार-धारा से सम्पन्न दिखलाई देने लगीं।

सुशीला को कविवर 'शून्य' जी से मिलने तथा बातें करने की पूर्ण स्वतन्त्रता थी। सुशीला का विवाह होने पर कवि के हृदय को ठेस लगी, परन्तु कवि ने उसे एक वीर योद्धा की भाँति सहन किया और एक दिन पश्चात् निर्भीकता पूर्वक प्रकाश बाबू की कोठी पर जा पहुँचे।

कोठी के द्वार पर कुछ ठहर कर राह देखनी पड़ी। अन्दर जाने में बाधा अनुभव करके निराश लौट जाना चाहा परन्तु इसी समय सुशीला स्वयं उनके सामने आकर एक चमत्कारपूर्ण वेश-भूषा में खड़ी हो गईं और होठों से मन्द मुस्कान बिखेर कर धीमे स्वर में बोली, "आओ कवि ! मैं समझती थी कि तुम रुठ गये होगे और मेरे पास कभी नहीं आओगे; परन्तु मेरा अनुमान गलत सिद्ध हुआ। तुम्हारी महानता ने उसे हार दे दी। मैं अपने विचारों में आने वाली इस भूल के लिए क्षमायाचना करती हूँ।"

"क्षमा-याचना ! परन्तु तुम्हें क्षमा प्रदान करने का अब मुझे अधिकार नहीं रहा ! लोग मन्दिरों में जाते हैं, मैं यहाँ चला आया, लोग याचना और प्राप्ति के लिए जाते हैं, मैं केवल दर्शन के लिए आया हूँ। तुम्हारे दर्शन न होने से मेरी कई कविताएँ दार्शनिक और विचार-प्रधान हो उठीं। मैं चाहता हूँ कि उनमें रस का संचार हो। मेरे मानस का रस उलीच कर तुम यहाँ आ छुपी हो..... जाने दो रानी ! मैं तुम्हें क्षमा नहीं कर सकूँगा, क्योंकि उसका मैं अधिकारी नहीं हूँ।"

"तुम वास्तव में दार्शनिक बन गये हो कवि !"

"बन गया हूँ कहोगी रानी ! यह नहीं कहोगी कि बना दिया है तुमने।" और इतना कहकर कवि ने अपने नेत्र नीले आकाश पर

बिछाते हुए दृष्टि को अदृश्य पर टिका दिया। कवि की वेष-भूषा में पहले से उतना ही अन्तर था जितना रानी सुशीला की अपनी वेष-भूषा में। कुर्त्ता उसने कई दिन से नहीं बदला था और शेरवानी की दशा से प्रतीत होता था कि कवि ने उसे पहने-पहने ही सोने का अभ्यास कर लिया था। हाथ की कलाई पर घड़ी बँधी अवश्य थी परन्तु उसे कई दिन से कूका नहीं गया था। जूतों में फीते नहीं थे।

कविवर 'शून्य' जी की यह दशा देखकर रानी सुशीला का हृदय हिल उठा और उसे अपने शृंगार पर स्वयं लज्जा सी प्रतीत होने लगी। अपने में ही बल खाती हुई सुशीला लज्जा के आवरण में नेत्रों को झाँपने का प्रयत्न करते हुए भी न मुस्करा पाकर धीरे से बोली—
“मेरी दुर्बलता पर दया-दृष्टि डालकर मुझे क्षमा कर दो कवि ! परन्तु यह सत्य समझो कि मेरी आत्मा आज भी तुम्हारे ही चरणों में है।”

कवि पागल की भाँति खिल-खिलाकर हँस पड़ा और फिर गम्भीर होकर बोला—“आत्मा ! आत्मा तुम्हारे पास कहाँ है अब रानी ! आत्मा के क्षेत्र से बाहर निकलकर अब तो तुम धन के परमात्मा की अङ्गु में आत्मा का उपहास करने के लिए आबंठी हो। जिस प्रकार परमात्मा आत्माओं का संसार रचकर उनके साथ खिलवाड़ करता है उसी प्रकार तुमने संसार में परमात्मा का लौकिक-प्रतिनिधि चुन लिया है। अन्तर केवल इतना ही है कि यदि परमात्मा कोई चीज है तो वह सौदा नहीं करता और उसका लौकिक-प्रतिनिधि सौदा पटाने में दक्ष्य है। तुम्हारे जीवन का सौदा उसने कितनी निपुणता से कट लिया ? मैं आज यही मानूँगा कि मैंने तुम्हारे रूप को अमूल्य केवल इसीलिए कहा था कि मेरे पास उसे क्रय करने के लिए पर्याप्त धन नहीं था।”

कवि के ये शब्द सुनकर सुशीला तनिक गम्भीर होकर बोली—
“आप जो चाहें मान सकते हैं, परन्तु कोरी कल्पना पर भी तो संसार नहीं चलता। आपके विचारों और आपकी भावनाओं का मैंने सर्वदा हृदय से स्वागत किया है, परन्तु जीवन की कठोर परिस्थितियों के

सामने आजाने पर भावना में बहना मैंने उचित नहीं समझा ।”

“तुमने जो कुछ किया मैं उसका हृदय से स्वागत करता हूँ रानी ! परन्तु मैं आज यहाँ प्रेमालाप करने नहीं आया । मैं तो आया था प्रकाश बाबू.....।”

“तब ठीक है । वह प्रोफेसर सुधांशु से बातचीत कर रहे हैं, सामने कमरे में बैठे हुए । आप भी वहाँ जा सकते हैं ।”

“मेरे वहाँ जाने से पूर्व तुम्हें वहाँ से आज्ञा प्राप्त करनी होगी रानी ! क्योंकि यह एक व्यापारी का मकान है, जहाँ कुछ गुप्त-रहस्यों के विषय में भी बातें चल सकती हैं । बिना आज्ञा वहाँ पहुँचकर मैं उनकी बातों में बाधा उपस्थित नहीं करना चाहता ।”

आज अपनी कोठी पर ‘शून्य’ जी को इस प्रकार आया देखकर प्रकाश बाबू ने सूचना पाते ही स्वयं आगे बढ़कर उनका स्वागत किया और सम्मानपूर्वक बैठक में लिवा कर ले गये । कवि का भावुक हृदय प्रकाश बाबू का यह स्वागत देखकर पानी-पानी होगया ।

प्रकाश बाबू की बैठक को देखकर कविवर दंग रह गये । कला की यह एक प्रदर्शनी था । पाँचों ललित कलाओं के सुन्दरतम नमूने यहाँ उपलब्ध थे । संगीत साजों के रूप में अमुखरित दशा के अन्दर सुप्त पड़ा विश्राम कर रहा था । चारों ओर दीवारों पर विश्व के प्रख्यात चित्रकारों के चित्र लगे हुए थे । कमरे का वायु-मंडल इत्र और अगर की महक से परिपूर्ण था । कवि को आदर के साथ मखमली सोफे पर प्रोफेसर सुधांशु के ठीक सामने बिठलाते हुए प्रकाश बाबू आनन्दपूर्वक बोले, “कविवर ‘शून्य’ जी को आज अपनी कुटिया पर देखकर मुझे हार्दिक प्रसन्नता हो रही है । कितना सुन्दर होता यदि मैंने भी सरस्वती का आशीर्वाद पाकर जन्म लिया होता ?”

“आपके सम्मान का मैं स्वागत करता हूँ प्रकाश बाबू ! आज अकस्मात् ही आपके यहाँ आकर मैंने जो कला का चमत्कार देखा उससे मेरे हृदय को वास्तविक प्रसन्नता हुई । कला की सजीव प्रतिमा सुशीला

कुमारी को अपने हृदय में निमंत्रण देकर आपने कला की महानु सेवा की है। मैं उसके लिए आपको बधाई देने आया हूँ।

प्रोफेसर सुधांशु कवि की भावुकता पर मुस्कराते हुए बोले, “कवि! तुम वास्तव में कवि हो। भारत की राजधानी के कलाकारों को तुम पर अभिमान होना चाहिए। शारीरिक रोगियों की सहायता के लिए भारतीय रक्त-कोष में रक्त-दान करने वाले तो बहुत मिल जायेंगे परन्तु हृदय-रोग से पीड़ितों के लिए हृदय-कोष में हृदय-दान करने वाले तुम प्रथम दानी करण हो। कला के क्षेत्र में तुम्हारा यह त्याग सराहनीय है।”

“वास्तव में सराहनीय है।” मन ही मन प्रोफेसर सुधांशु के गंभीर व्यंग्य पर ऊपर से मुस्कराते हुए प्रकाश बाबू बोले।

कविवर ‘शून्य’ जी के पास इन व्यंग्य-विचारों से उलझने का न तो समय ही था और न आवश्यकता ही। प्रकाश बाबू की बैठक ने उन्हें इतना वशीभूत कर लिया था कि वह बिना प्रोफेसर सुधांशु से एक शब्द भी बोले उमर खय्याम के चित्र के नीचे जा खड़े हुए और भूम-भूमकर गुन-गुनाते हुए बोले, “प्रकाश बाबू ! चित्रकार ने चित्र में प्राण फूँक दिये हैं।”

“यह चित्र मैंने दो हजार रुपये का मोल लिया था ‘शून्य’ जी ! उस प्रदर्शनी में यही चित्र सबसे सुन्दर था। केवल इसी चित्र के पीछे मैंने वहाँ पर दो राजकुमारों को वह करारी मात दी कि वे जीवन भर याद रखेंगे।”

“क्यों क्या अटक बैठे थे आपसे ?”

“जी हाँ; परन्तु टक्कर प्रकाश बाबू से थी, जिसने चित्रकार की रंग भरने की कूँची, रंग धोलने की तश्तरियाँ और चित्र बनाने के कोरे कागजों से लगाकर तैयार किए हुए सब चित्रों के मुँह माँगे दाम देकर खरीद लिये थे !”

“क्यों नहीं, क्यों नहीं ?” ‘शून्य’ जी बोले।

प्रोफेसर सुधाशु अकेले चुपचाप बैठे रह गए और प्रकाश बाबू कविवर 'शून्य' जी को अपनी बैठक की विशेष कारीगरी दिखलाने में व्यस्त हो गये। यह बैठक एक अजायबघर के रूप में प्रकाश बाबू ने तैयार की थी, जिसका प्रभाव न केवल कविवर 'शून्य' जी पर ही पड़ा, वरन प्रत्येक दिशा के व्यक्ति को प्रभावित करने की सामग्री इसमें उपलब्ध थी। इस सामग्री को किसी आगन्तुक के सम्मुख किस प्रकार रखना चाहिए, इस कला में प्रकाश बाबू बहुत प्रवीण थे।

इस नए पंखी को प्रकाश बाबू के जाल में फँसा हुआ छोड़कर प्रोफेसर सुधाशु धीरे से एक ओर का पर्दा उठाकर खिसक लिए। बाहर पोर्टिगो में खड़ी सुशीला ने प्रोफेसर साहब को आदरपूर्वक प्रणाम करते हुए पूछा, "आप जा रहे हैं?"

"हाँ सुशीला ! मुझे कुछ आवश्यक कार्य है।"

"और कविवर 'शून्य' जी?"

"उन्हें अभी कुछ समय और लगेगा। प्रथम बार आये हैं। प्रकाश बाबू से आज खूब पट रही है।"

"सच!"

"सच या झूठ यह तुम स्वयं देख लो। कला-प्रदर्शनी का निरीक्षण हो रहा है।"

इतना कहकर प्रोफेसर साहब चले गए और सुशीला बाहर लॉन में चली गई। संध्या ढल रही थी। सूर्य की अंतिम लालिमा रात्रि के अंधकार में विलीन हुआ चाहती थी। सड़क की बत्तियाँ यकायक इसी समय भम-भमा उठीं और सुशीला ने भी माली से कोठी के सामने वाली बत्ती को प्रकाशित करने के लिए आदेश दिया। प्रकाश बाबू कविवर 'शून्य' जी का इस प्रकार स्वागत करेंगे इसकी सुशीला को स्वप्न में भी आशा नहीं थी। उसका भारी मन हलका हो गया और प्रकाश बाबू के प्रति आज प्रथम बार मीठी-मीठी श्रद्धा ने जन्म लिया। कविवर 'शून्य' जी का स्वागत स्वयं सुशीला का स्वागत था, और यह वह मधुर

प्यार की कल्पना थी जिसमें आत्म-विस्मरण और आत्म-समर्पण झाँक रहा था ।

: ५ :

प्रोफेसर सुधांशु प्रकाश बाबू की कोठी से चल कर सीधे अपने घर जाना चाहते थे । उन्हें मार्ग में नियाज अहमद मिल गये । नियाज अहमद महारौली से चले आ रहे थे । वहाँ की सूचना देते हुए बोले, “सड़क के बाईं ओर के सब प्लाट बिक चुके हैं । किसी महानुभाव ने कोई बहुत बड़ा कारखाना वहाँ लगाने और अपनी नई योजनाओं द्वारा उसके आस-पास में नई बस्ती बसाने का आयोजन किया है ।”

“चलो कोई बात नहीं । बाईं ओर का प्लाट खाली पड़ा है । आप वहीं ले लीजिए । सड़क के बाईं ओर एक ऊबड़-खाबड़ सी बस्ती है, कच्चे मकानों की । उसी के अन्दर या कहीं आस-पास कोई स्थान लेलीजिये । हम लोग वहाँ रहकर उसी बस्ती को सुधार लेंगे और उसे नया रूप देकर वहाँ के रहने वालों में शिक्षा का प्रचार करेंगे । एक दिन हम उसी गन्दी बस्ती को स्वर्ग बना लेंगे !”

“अवश्य बना लेंगे प्रोफेसर साहब ! आपके सम्मिलित प्रयोगों की योजना उस उजाड़ बस्ती में प्राण फूँक देगी । उसके खंडहरों को सुन्दर और सुव्यवस्थित बना देगी । उस बस्ती की गलियों में आवाजाही घूमने वाले बच्चों को पाठशालाओं में बिठला देगी, गाँव के सड़े वातावरण को स्वच्छ बना देगी—स्वर्ग बन जायगी वह बस्ती ?” आशा भरे स्वर में नियाज अहमद ने कहा ।

“यही होगा नियाज अहमद ! तुम वहीं पर एक प्लाट लेलो ।”

बातें करते हुए प्रकाश बाबू के विषय में बातें छिड़ गईं । कविवर ‘शून्य’ जी किस प्रकार प्रकाश बाबू के अजायबघर की कला-प्रदर्शनी देख कर रीझ उठे, उसका भी जिक्र नियाज अहमद से किया ।

यह घर पहुँचे तो देखा कि मिस केतकी पहले से ही वहाँ बैठी थीं ।

“अरे ! केतकी ! तुम यहाँ बैठी हो । लो, अच्छा ही हुआ । वरना हमें अभी तुम्हारे पास आना होता ।”

“क्यों ? क्या कोई विशेष बात है ?”

“नियाज साहब को महरीली वाली सड़क पर हवाई जहाज के अड्डे से दो मील आगे चल कर दाईं ओर की भूमि में एक प्लाट लेने के लिए भेजा था, परन्तु ज्ञात हुआ कि वहाँ का समस्त भू-भाग किसी महाशय ने लेलिया है । वहाँ वह कोई साहब मिल लगाने वाले हैं । इसलिए हमने विचार किया है कि ठीक उसके सामने सड़क के बाईं ओर जो बस्ती है, उसी में एक प्लाट ले लिया जाय ।”

“परन्तु वह बस्ती तो बहुत गन्दी है और उसके आस-पास का वायु-मंडल भी खराब है । पानी के कच्चे तालाब इतने गन्दे हैं कि वहाँ बारहों महीने मलेरिया रहता है ।”

“तब क्या हुआ ? तुम तो डाक्टरनी हो । गन्दगी को साफ करके स्वच्छता में बदल लेना । क्यों क्या यह नहीं हो सकता ?”

नियाज अहमद, “क्यों नहीं हो सकता ? हम उस स्थान को बहुत स्वच्छ बना देंगे । उस बस्ती के बच्चे-बच्चे को हम सफाई के काम पर जुटा देगे और चन्द दिनों में ही आप देखेंगी कि उस गन्दी बस्ती का रूप-रङ्ग बदल जायगा ।”

“यह सब आप कर सकेंगे, इसका विश्वास है आपको ? बिला पैसे मैंने योजनाओं को कागज के टुकड़ों पर ही नाचकर रहजाते हुए देखा है । समस्याएँ धन के अभाव में सुधरने के स्थान पर उल्टी और उलझ जाती हैं । क्या आपने कभी अनुभव नहीं किया इस बात का ?” कहकर मिस केतकी गम्भीर हो गईं ।

“देखा क्यों नहीं है मिस केतकी ! परन्तु साहस और सुव्यवस्था को मैंने घनाभाव पर विजय प्राप्त करते भी देखा है । अभाव और साधन की कोई सीमा नहीं । ये बढ़ाने से बढ़ते और घटाने से घटते हैं ।

अभी उस दिन आपने देखा था कि मैंने अपनी आधी धोती फाड़ कर उस बच्चे के शव को लेजाने के लिए दी थी। और बाजे गाजों के साथ मुर्दों पर बीस-बीस शाल-दुशाले लदे भी तुम नित्य ही देखती हो। कार्य-सचालन में यह मैं नहीं कहता कि धन महत्वपूर्ण स्थान नहीं रखता, परन्तु धन को व्यक्ति पैदा करता है। धन व्यक्ति को पैदा नहीं करता।”

“यह खूब कहा प्रोफेसर साहब आपने ! मैं दाद देता हूँ आपके विचारों की। कितनी बुलन्दी है आपके विचारों में। इन्सान की आवश्यकता का खाका खींच दिया आपने। रुपये को जो स्थान रुपये वालों ने दे दिया है वह नहीं मिलना चाहिए। आज रुपया हमारी इन्सानियत पर छागया है। रुपये ने हमारी सभ्यता को खरीदने का बीड़ा उठाया हुआ है, रुपये ने हमारे आपसी प्यार मुहब्बत को शत्रुता और चाल-बाजियों में बदल दिया है... नहीं-नहीं प्रोफेसर साहब ! इसे नहीं चलने दिया जायगा। मैं जी-जान से आपकी योजनाओं पर जुटकर एक नई दुनियाँ का खाका तैयार करूँगा, जिसमें सब बराबर के अधिकार लेकर एक दूसरे की उन्नति के लिए मेहनत करेंगे।”

“केवल वायु-मंडल में दुर्ग बनाने से काम नहीं चल जाता है नियाज भय्या ! मैं देख रही हूँ कि आप लोग कोरी बातें ही बनाना जानते हैं और दूसरी ओर प्रकाश बाबू अपनी ठोस योजनाओं के साथ एक तूफान की तरह उन्नति के पथ पर अग्रसर हो रहे हैं।” मिस केतकी ने सहानुभूतिपूर्ण स्वर में कहा।

“तुम सत्य कह रही हो मिस केतकी ! मेरे विचार से सड़क के दाँई ओर वाला समस्त भू-भाग प्रकाश बाबू ने ही लिया है। यह और भी अच्छा हुआ। अब तो मुझे निश्चित रूप से उसी टूटी-फूटी बस्ती में अपनी योजनाओं का विकास करना है। धन के अभाव में मैं दाँई ओर वाला भू-भाग नहीं ले सका, परन्तु मेरा न लेना अच्छा ही हुआ। कम-से-कम उस बस्ती का तो अन्त होने से बच गया। यदि मैंने दाँई ओर का भू-भाग ले लिया होता तो हो सकता था प्रकाश बाबू बाँई ओर का

भू-भाग लेकर उस बस्ती को उजाड़ डालते ।” इतना कहकर प्रोफेसर सुधांशु यकायक गम्भीर हो उठे । उनके मस्तक पर सलवटें बल खाने लगीं और नेत्र बैठक की छत पर फैल गये ।

तीनों बैठक में जाकर कुर्सियों पर बैठ गये । सुधांशु बोले, “गाड़ी लाई हो मिस केतकी !”

“लाई हूँ ।”

“दे सकोगी एक घंटे के लिए ?”

“केवल एक घंटे के लिए ?” मुस्कराते हुए केतकी ने कहा और तुरन्त ही तीनों व्यक्ति उठकर खड़े हो गये । मिस केतकी अपनी डिस्पेंसरी में उतर गईं और नियाज अहमद तथा प्रोफेसर सुधांशु महरोली की ओर चले गये ।

मिस केतकी ने अपने रोगियों को देखा और देख कर बैठी ही थी कि प्रकाश बाबू आगये । उनके साथ कविवर ‘शून्य’ जी भी थे । मिस केतकी ने दोनों का खड़े होकर स्वागत किया ।

प्रकाश बाबू बोले, “मिस केतकी ! तुम्हें यह जानकर प्रसन्नता होगी कि कविवर ‘शून्य’ जी की रचनाओं के प्रकाशन के लिए मैंने पचास हजार रुपया देने का निश्चय किया है ।”

“बहुत सुन्दर, बहुत सुन्दर प्रकाश बाबू ! मैं आपके इस शुभ कार्य की सराहना करती हूँ । ऐसा करके आपने कविवर ‘शून्य’ जी पर ही उपकार नहीं किया, वरन कला की महान् सेवा की है ।”

“निश्चित रूप से मिस केतकी ! मैं ऐसे दानी की प्रशंसा में एक कविता लिखूँगा ।” प्रसन्नता पूर्वक शून्य जी बोले, “मेरा विचार था कि रीति-कालीन नरेशों के पश्चात् भारत में कला के पारखी जन्मे ही नहीं परन्तु आज प्रकाश बाबू की उदारता देखकर मुझे अपना विचार बदलना पड़ा । प्रकाश बाबू मुझे कला की साक्षात् प्रतिमा के रूप में दृष्टि-गोचर हो रहे हैं । मैं आज परख पाया हूँ इन्हें । व्यापार और कला का

कितना सुन्दर सामंजस्य है ? आप देखेंगी कि एक दिन भारत को गर्व होगा इस महान् विभूति पर ।”

“क्यों नहीं ?” मुस्कराते हुए मिस केतकी बोलीं । “प्रकाश बाबू ने आज वास्तव में कला का चमत्कार प्रदर्शित किया है । मैं समझती हूँ कि प्रकाश बाबू ने कविवर ‘शून्य’ जी को यह रुपया भेंट कर दिया होगा ।” कहकर मिस केतकी मुस्कराती-मुस्कराती रुक गईं ।

जिस समय से प्रकाश बाबू ने पचास हजार रुपया ‘शून्य’ जी की रचनाओं के प्रकाशन के लिए घोषित किया था, उस समय से ‘शून्य’ जी का मस्तिष्क एक से एक नवीन योजना की तरंगों में बह रहा था । शेख चिल्ली की भाँति आपने अशाओं के वे दुर्ग अपने मस्तिष्क में निर्मित कर लिये थे कि जिनमें बैठकर वह जीवन भर सुख तथा चैन की बाँसरी बजाया करेंगे ।

प्रकाश बाबू ने गम्भीरता पूर्वक कहा, “हमने श्रीयुत कविवर ‘शून्य’ जी के नाम से एक ट्रस्ट स्थापित करने का निश्चय किया है । उस ट्रस्ट में ही यह पचास हजार रुपया भी जमा कर दिया गया है ।”

“ट्रस्ट में !” चकित दृष्टि से प्रकाश बाबू की ओर देखकर ‘शून्य’ जी बोले ।

“हाँ कविवर ‘शून्य’ जी ! इस प्रकार यह पचास हजार रुपया आपकी स्थायी सम्पत्ति बन जायगा और आपको इससे मासिक आय होती रहेगी ।” गम्भीरता पूर्वक प्रकाश बाबू ने कहा ।

“अर्थात् ! यह पचास हजार रुपया अपनी एक जेब से निकाल कर दूसरी जेब में डालने की कलात्मक क्रिया द्वारा आपने मुझे जीवन भर के लिए अपना दास बना लिया ।” तयारी बदल कर ‘शून्य’ जी बोले । “अब समझा मैं आपकी चाल प्रकाश बाबू ! मुझे आपका रुपया नहीं चाहिए । मैं आपकी प्रशंसा में कोई कविता-वविता नहीं लिखूँगा !” और इतना कह कर ‘शून्य’ जी गर्मी में वहाँ से खड़े होकर बाहर चले गये ।

“कवि क्या है, पूरा काठ का उल्लू है मिस केतकी ! मैंने तो सोचा था कि चलो इस बेचारे को सौ पचास रुपया मासिक मिल जाया करेगा वरना पचास हजार रुपये की रकम इस प्रकार एक मूर्ख को अनोत्पादक रूप में केवल खा-चाटने के लिए नहीं सौंपी जा सकती । आपका क्या विचार है इस सम्बन्ध में मिस केतकी ?” प्रकाश बाबू बोले ।

मिस केतकी की बिखरी हुई घुँघुराली लटों में प्रकाश बाबू के नेत्र उलभ गये और एक क्षण में ही उनके मस्तिष्क से कविवर ‘शून्य’ जी ऐसे बिदा हो गये कि मानो वह कभी वहाँ थे ही नहीं । इसी समय प्रकाश बाबू की दृष्टि केतकी की नाक में पहनी हुई एक लोंग पर पड़ी और वह कह बैठे, “यह लोंग तुम्हारे पास कहाँ से आई केतकी !”

“क्यों ? क्या कोई विशेष बात है इसमें ?”

प्रकाश बाबू ध्यान से देखकर बोले, “परन्तु यह तो पुखराज की है । हीरे की लोंग लौटा कर पुखराज की लोग पहनना आपको शोभा नहीं देता मिस केतकी !”

“जाने दीजिए इन बातों को प्रकाश बाबू ! अब ये बातें पुरानी हो चुकीं ।” और इतना कह कर मिस केतकी ने एक गहरा साँस लिया । प्रकाश बाबू भी चुप थे । कुछ देर दोनों इसी प्रकार मौन रहकर प्रकाश बाबू की कार में जा बैठे ।

: ६ :

प्रोफेसर सुधांशु को स्थान बहुत पसंद आया और उन्होंने गाँव के कुछ प्रतिष्ठित व्यक्तियों को बुलाकर वहाँ एक बच्चों का स्कूल खोलने का प्रस्ताव उनके सम्मुख रखा । प्रोफेसर साहब को ये लोग गाँव की चौपाल पर ले गये, जो गाँव के बीचों बीच थी । चौपाल की कच्ची दुकड़िया थी, जिसमें शहतीरों के स्थान पर दो खजूर के वृक्ष काटकर

गाँव वालों ने लगा लिये थे। इस दुकड़िये के सामने एक चबूतरा था, जिस पर नीम का घिनका वृक्ष लगा था और उसकी छाया इतनी शीतल थी कि उस मार्ग से निकलने वाला राही गर्मी के दिनों में दो क्षण वहाँ विश्राम करने के लिए अवश्य लालायित हो उठता था। चौपाल के इसी चबूतरे के एक किनारे पर छोटी सी प्याऊ थी और दूसरी ओर दो उपले सिलग रहे थे, हुक्का पीने वालों के लिए।

प्रोफेसर सुधांशु तथा नियाज अहमद का यहाँ स्वागत बड़े आकर्षक ढंग से किया गया। एक बूढ़ा आदमी अपने घर से दो गिलास शर्बत के भी बनाकर लाया। बहुत देर तक गाँव के आदमियों से बात-चीत होती रहीं और फिर प्रोफेसर सुधांशु ने उन सबको साथ लेकर गाँव को देखा। प्रोफेसर साहब के बच्चों का स्कूल खोलने के प्रस्ताव का किसी ने भी विरोध नहीं किया और जब उन्हें यह पता चला कि प्रोफेसर सुधांशु इस स्कूल के साथ ही वहाँ एक दवाखाना भी खोलना चाहते हैं तो गाँव वालों की बाँछें खिल गईं। उनकी प्रसन्नता का कोई ठिकाना न रहा और सब ने मिलकर गाँव की चौपाल का अधिकार बिना किसी संकोच के प्रोफेसर साहब को दे दिया।

प्रोफेसर सुधांशु की आज की यात्रा कितनी सफल रही, इसका और इसके भविष्य का अनुमान केवल वही लगा सकते थे। जिस समय यह इस गाँव से लौट रहे थे तो इनकी मुख-मुद्रा पर प्रसन्नता थी और गाँव वाले स्वप्न के समान इनके मुख को निहार रहे थे। उन्हें विश्वास नहीं था कि कहाँ तक प्रोफेसर साहब के आश्वासन सत्य होंगे। नियाज अहमद भी अपने विचारों में संदिग्ध था। केवल प्रोफेसर सुधांशु ही एक ऐसे व्यक्ति थे जिनके मस्तिष्क में संदिग्ध विचार-धारा के लिए कोई स्थान नहीं था।

प्रोफेसर तथा नियाज मिस केतकी की डिस्पेंसरी पर पहुँचे तो वह वहाँ नहीं थीं। कम्पाउन्डर से ज्ञात हुआ कि वह प्रकाश बाबू के साथ कहीं

गई हैं। नियाज अहमद यहीं से विदा हो गये और प्रोफेसर साहब कार यहीं पर छोड़ कर अपने घर चले गये।

प्रोफेसर साहब का मस्तिष्क आज समस्याओं से भरा था और उस गाँव के भविष्य की सम्पूर्ण रूप-रेखा वह निश्चित कर चुके थे। यह सत्य था कि उनके पास पैसा नहीं था परन्तु नियाज अहमद जैसा साथी उनके पास था। कविवर 'शून्य' जी तथा रानी सुशीला के पथ-भ्रष्ट हो जाने का उन्हें खेद था परन्तु मिस केतकी के विषय में अब कुछ-कुछ आशा-किरणों के प्रकाशमान होने की सम्भावना निश्चित होने लगी थी।

प्रोफेसर सुधांशु इस सत्य से अपरिचित नहीं थे कि मिस केतकी प्रकाश बाबू को प्रेम करती थी और प्रकाश बाबू के भी हृदय में उसके लिए कोमल स्थान था, परन्तु रानी सुशीला से प्रकाश बाबू के विवाह कर लेने के पश्चात केतकी का मन बदल गया था।

फिर भी इस समय कम्पाउन्डर से यह सूचना पाकर कि मिस केतकी प्रकाश बाबू की कार में उनके साथ कहीं गई है, उनका ध्यान विचलित हो उठा। ग्राम की समस्याएँ केतकी के चरित्र-विश्लेषण में विलीन होने लगीं और वह ग्राम्य-समस्याओं तथा सहयोगी योजनाओं पर विचार करते-करते नारी के चरित्र पर विचार करने लगे।

सुशीला के जीवन में कैसा विचित्र परिवर्तन हुआ ? मानो किसी ने जादू कर दिया। कल्पना और भावना के क्षेत्र में विचरण करने वाली चाँदी के टुकड़ों पर लालायित हो उठी। जिसे कल तक हृदय प्यार करता था। उसी से आज सम्बन्ध विच्छेद करके... और कवि ! वह तो बिल्कुल ही विचित्र निकला। उसपर तो आज दया आने लगी।

इन विचारों में निमग्न प्रोफेसर सुधांशु जब अपने घर पहुँचे तो कविवर 'शून्य' जी वहाँ पहले से ही विराजमान थे। प्रोफेसर साहब को देखकर खड़े होते हुए, हाथ जोड़ कर बोले, "क्षमा-याचना करता हूँ प्रोफेसर साहब ! सत्य समझिए कि मैं उस धूर्त के जाल में फँसता-फँसता

किसी प्रकार बच निकला । न जाने किस प्रकार मेरी गुप्त चेतना यका-यक जागृत हो उठी और मेरे सम्मुख जो गढ़ा प्रकाश बाबू खोदने जा रहे थे, वह मुझे दिखलाई दे गया । सच जानिए, मैं गिरते-गिरते ज़रा-ज़रा ही बच गया ।”

“कुछ जानूं भी तो कि क्या धूर्ता हुई आपके साथ ? क्योंकि मैं प्रकाश बाबू को धूर्त नहीं मानता ।”

“नहीं मानते !” क्रोध में आश्चर्य चकित होकर कविवर आँखों की त्योंरी चढ़ाते हुए अपने सूखे घुँघराले बालों वाले सिर को मदारी की भाँति घुमा कर बोले, “आप नहीं मान सकते ।”

“ऐसा क्यों ?”

“आप दोनों की मित्रता है, इसलिए ।”

“कारण यह नहीं है कविवर ! कारण यह है कि तुम कवि बनने से पूर्व आदमी बनना सीखो । पहले व्यक्तित्व का विकास होने दो और तब अपना हलकापन तुम स्वयं जान सकोगे । दूसरे को धूर्त कहने से पूर्व व्यक्ति को अपने गिरहवान में मुँह डाल कर देखना चाहिए ।”

बात प्रोफेसर सुधांशु ने इतनी सरलता से कही कि कविवर ‘शून्य’ जी का सिर ऊपर को न उठ सका । उनके नेत्रों से अश्रु-धारा बह चली । प्रोफेसर साहब ने प्रेम तथा सहानुभूति के साथ उन्हें सँवार कर एक कुर्सीदार मूढ़े पर बिठलाया और अपनी जेब से रुमाल निकाल कर उनके गीले नेत्र पोंछ दिये ।

प्रोफेसर साहब कविवर ‘शून्य’ जी को इस प्रकार बैठक में बिठला कर अन्दर कपड़े उतारने चले गये । अभी कपड़े उतार कर बाहर आये ही थे कि मकान के सामने प्रकाश बाबू की कार आकर रुकी और उस में से मिस केतकी तथा प्रकाश बाबू उतर कर बैठक में आगये । कविवर ‘शून्य’ जी उसी प्रकार स्थिर रूप से पत्थर की शिला के समान बैठे रहे ।

तीनों के बैठते ही बातों का विषय प्रकाश बाबू की नवीन योजनाएँ

बना। बहस प्रारम्भ हो गई। मतभेद दोनों का सैद्धांतिक था, पारस्परिक नहीं। कविवर 'शून्य' जी बीच-बीच में कभी-कभी गर्दन उठा कर स्वप्न से जागृत से होते हुए कुछ सुन लेते थे, परन्तु मिस केतकी बातों में विशेष रस ले रही थीं। उनके नेत्र उसी के मुख पर टिक कर स्थिर हो जाते थे जो बोलना प्रारम्भ करता था और दोनों के अक्राट्य प्रमाणों के साथ बह कर वह अपनी कोई निश्चित विचार-धारा बनाने में असमर्थ थी।

“मानव और पशु में केवल यही अन्तर है प्रोफेसर सुधांशु ! कि मानव के पास मस्तिष्क है। आप जानते हैं आज तक मानव ने अपने मस्तिष्क का प्रयोगों की दिशा में क्या किया है ? उसने अपने मस्तिष्क से प्रकृति पर विजय प्राप्त की है।” प्रकाश बाबू ने कहा।

“यह बात मैं मानता हूँ।”

“यदि आप मानते हैं तो मेरी बात सत्य हो जाती है। मस्तिष्क की यह शक्ति संसार के सब व्यक्तियों में समान रूप से नहीं पाई जाती। इसलिए यही असमानता समाज की असमानताओं का कारण बन कर समाज में श्रेणियों की स्थापना करती है।

“क्या स्वार्थ-पूर्ण बातें करते हो प्रकाश बाबू ! जिस असमानता को तुम मस्तिष्क की विशेषता कहते हो वही मानव के चरित्र की वह संकुचित मनोवृत्ति है जिसके फल-स्वरूप संसार में आज तक संघर्ष और युद्ध का बीजारोपण होता आया है। जिसे तुम व्यक्ति के विकास की विशेष प्रगति मानते हो उसे मैं दूसरों के अधिकारों को हड़प करना समझता हूँ। मस्तिष्क की शक्ति का यह दुरुपयोग है। इसका मानव-जीवन की शांति से कोई सम्बन्ध नहीं।”

प्रकाश बाबू प्रोफेसर सुधांशु की यह बात सुनकर मुस्करा दिये और व्यंग्यपूर्ण दृष्टि उनके मुख पर डाल कर धीरे से अपना मुख घुमा कर केतकी के नेत्रों में नेत्र डालते हुए बोले, “यह अशक्त का सशक्त के प्रति विष उगलना मात्र है और सर्वदा बना रहेगा। परन्तु उन्नति के पथ पर चलने वाला राही कभी इसकी चिन्ता नहीं करेगा। मैंने मह-

रोली जाने वाली सड़क पर हवाई अड्डे से दो मील दौड़ और सौ एकड़ भूमि खरीद ली है। वहाँ मैं एक मिल लगाऊँगा। और वहीं पर अपने रहने के लिए एक आलीशान महल बनाऊँगा। इस कार्य को करने के लिए मुझे वहाँ के पुराने रहने वालों को उजाड़ देना होगा, उनके टूटे-फूटे घरों को बिस्मार कर देना होगा.....”

“तुम महलों के स्वप्न देखते हो प्रकाश बाबू ! परन्तु मैं तो भारत के प्रत्येक व्यक्ति के लिए एक मकान की व्यवस्था करना चाहता हूँ। तुम गरीबों की झोंपड़ियों में आग लगा कर उनकी राख पर अपना महल बनाना चाहते हो, और मैं उन्हें साफ़ सुथरा करके उनमें लहलहाता हुआ स्वस्थ जीवन बिछा देना चाहता हूँ। भारत की रियासतों के ज्वलंत उदाहरणों को देखो ? वहाँ के महलों का आज क्या रूप है ? तुम्हारी यह विद्युत प्रगति विनाश की क्रोड़ में पल रही है। जिसे तुम मानव की शक्तियों का विकास कहते हो उसे मैं ह्रास मानता हूँ। रबड़ को उतना खींचिए प्रकाश बाबू ! जिससे वह टूट कर उल्टी अपने पर चोट न करे।”

“अनधिकार चेष्टा मुझे आप लोगों की बातों में बोलने की करनी तो नहीं चाहिए प्रकाश बाबू, परन्तु यह सत्य है कि आपके कार्य-क्रमों में स्वार्थ और असमानता की बू आती है।” स्वाभाविक सरलता से मिस केतकी ने कहा।

मिस केतकी के ये शब्द सुनकर कविवर ‘शून्य’ जी सिर ऊँचा करके अपने घुँघराले बालों को हिलाते हुए गम्भीर ध्वनि में बोले, “मानव की जिस मनोवृत्ति को आपने ‘स्वार्थ’ कहकर पुकारा है, मिस केतकी ! वह धूर्त व्यक्ति की वह शक्ति है जिसके बल पर वह मानव मात्र की प्रगति से शत्रुता करता है। मैं उस शक्ति को भारत में प्रस्फुटित नहीं होने दूँगा। जब तक मेरी लेखनी में बल है तब तक यह मनोवृत्ति यहाँ नहीं पनप सकती।” कहकर ‘शून्य’ जी गम्भीर विचार-धारा में निमग्न हो गये।

प्रकाश बाबू 'शून्य' जी की बात से तनिक भी विचलित न होकर बोले, "मिस केतकी ! विषय बहुत गम्भीर है, और तुमने जो कुछ भी समझा, वह बहुत सजुचित है। रही बात स्वार्थ की, सो स्वार्थ की भावना ही मानव की प्रगति की वह शक्ति है जो मानव-जीवन को संचालित करती है। जिस व्यक्ति में स्वार्थ को समझने की क्षमता नहीं वह परमार्थ को क्या समझेगा ? जो व्यक्ति कमा कर धन एकत्रित कर सकेगा, वह दान भी दे सकेगा।"

"दान !" और दान का शब्द उच्चारण करके शून्य जी जोर से खिल-खिला कर हँस पड़े। "दान देना धूर्तता है और दान ग्रहण करना मानव का अपमान।" कह कर बिना उत्तर की प्रतिक्षा किये 'शून्य' जी उठकर बैठक से बाहर चले गये।

"आपके लिए कविवर 'शून्य' जी ने जिन कटु शब्दों का प्रयोग किया है उनके लिये मैं क्षमा चाहता हूँ प्रकाश बाबू !"

"क्षमा माँगने की आपको आवश्यकता नहीं है प्रोफेसर साहब ! ऐसे मूर्ख मोहरे तो जीवन की शतरंज पर पिटने के लिए नित्य न जाने कितने आते हैं। इनका मस्तिष्क कुछ खराब हो गया मालूम देता है।"

"यह भी सम्भव है; क्योंकि जब किसी की कोई आशा निराशा में परिणत हो जाती है तो उसका प्रभाव उसके मस्तिष्क पर पड़ता ही है।"

"भाई मैं तो सौदा करता हूँ। खरे दाम देता हूँ। छल नहीं करता किसी के साथ। चोरी नहीं करता किसी की।" कह कर प्रकाश बाबू मुस्करा दिये।

"परन्तु चोरी का माल पैसे देकर खरीदने पर भी चोरी का ही रहता है, यह सत्य आप भुला कर नहीं चन सकते। पुलिस जब चाहे आपको हथकड़ियाँ लगा सकती है।"

"यह चोरी नहीं डाका है, प्रोफेसर साहब ! परन्तु मैं अभी तक यह निर्णय नहीं कर सकी हूँ कि कौन डाका डालने वाला है और किस पर डाका डाला गया।" मुस्कराते हुए मिस केतकी ने कहा।

“पुलिस सब पता चला लेगी।”

“पुलिस की गहराई को मापना मैं खूब जानता हूँ प्रोफेसर साहब ! यह पता नहीं लगा सकेगी। हाँ यदि सरकार ने पुलिस-विभाग आपके सुपुर्द कर दिया तो सम्भव है कि कुछ.....”

“तब तो कुछ नहीं प्रकाश बाबू.....”

“अजी रहने भी दो ! मेरे चाँदी के जूते की ठोकर सँभालना किसी के बस की बात नहीं है। मैंने स्पात को मोम बन-बन कर बहजाते हुए देखा है।”

प्रोफेसर सुधांशु विषय बदल कर मिस केतकी से बोले, “आज मैंने तुम्हारी कार लेकर निश्चय ही तुम्हारी हानि की होगी।”

“हानि कुछ नहीं की आपने। मुझे आवश्यकता ही नहीं हुई। एक रोगी को देखने के लिए जाना था सो प्रकाश बाबू अपनी कार लेकर आ पहुँचे। आज मैंने प्रकाश बाबू को एक विचित्र प्रकार का रोगी दिख-लाया। आप उसे देखकर नहीं पहचान सकते कि उसे कोई रोग है, परन्तु वह अन्दर से खोखला हो चुका था।”

“वह व्यक्ति कोई बहुत बड़ा धनाढ्य होगा।”

“आपका अनुमान ठीक है।”

“व्यक्ति कभी-कभी अपने को भी धोखा देता है प्रकाश बाबू ! परन्तु यह कभी भी उसके लिए हितकर नहीं होता।”

“बस रहने दीजिए इन बातों को। मैं आज आपके पास सहयोग की भावना लेकर आया हूँ।”

“सहयोग की भावना ! परन्तु आपकी विचार-धारा का मेरी विचार-धारा के साथ मेल नहीं खा सकता। भारत की समस्याओं के विषय में आपका और मेरा दृष्टिकोण ही विपरीत है। तुम यदि यह भावना लेकर आये हो कि जो तुम बड़ा भारी मिल लगा रहे हो उसका प्रबन्ध मैं सँभाल लूँ तो यह मैं नहीं कर सकूँगा, कभी नहीं।”

“परन्तु क्यों ? इसमें हजारों मजदूरों को काम मिलेगा । लाखों का पेट पलेगा.....।”

“परन्तु उन सबको आपके महल की छत्रछाया में रहना पड़ेगा । और यदि किसी दिन आपके महल की कोई मंजिल चकनाचूर होकर नीचे गिर पड़ी तो उन बेचारे मजदूरों को भी उसके नीचे पिस जाना होगा ।”

“तो आप निर्माण से पहले विनाश पर जा पहुँचे ।”

“छोटी दृष्टि से भारत की महान् समस्याओं को आँकने की भूल मैं नहीं कर सकता ।”

प्रकाश बाबू ने बातों का विषय बदल दिया और फिर बहुत देर तक इधर-उधर की बातें चलती रहीं । मिस केतकी के कार्य के विषय में एक लम्बी चर्चा चली और प्रोफेसर सुधांशु ने उसकी मुक्तकंठ से प्रशंसा की; परन्तु प्रकाश बाबू ने उसे मिस केतकी के लिए एक बंधन मात्र ही माना ।

प्रोफेसर सुधांशु ने अपनी ग्राम-यात्रा के विषय में कुछ नहीं कहा और न ही केतकी ने उसके विषय में कोई चर्चा ही चलाई । प्रकाश बाबू और अधिक यहाँ न रुक सके क्योंकि उन्हें अपनी कम्पनी के डाइरेक्टर्स की मीटिंग में जाना था और आज उसमें कुछ महत्वपूर्ण निर्णय होने थे । मिल के जनरल मैनेजर की नियुक्ति के विषय में भी आज ही चर्चा चलनी थी, इसीलिए प्रकाश बाबू प्रोफेसर सुधांशु के पास आये थे; परन्तु उनकी यह आशा फलीभूत न हो सकी ।

“अच्छा प्रोफेसर सुधांशु ! नमस्कार ! मुझे एक आवश्यक कार्य से जाना है ।” खड़े होकर प्रकाश बाबू ने कहा ।

“कुछ देर और बैठते प्रकाश ! आपसे मिलकर बहुत प्रसन्नता होती है । विचारों में आकाश-पाताल का अन्तर होने पर भी हृदय इतने निकट से तुम्हें स्नेह करता है कि वाणी से मैं उसका वर्णन नहीं कर सकता ।”

प्रकाश बाबू कृतज्ञता प्रकट करके चल दिये और उनके साथ मिस केतकी भी चलीं गईं ।

प्रोफेसर साहब के मस्तिष्क में वे ग्राम की समस्याएँ फिर उभर कर ऊपर आ गईं और वह एकांत में कागज कलम लेकर कुछ लिखने के लिए बैठ गये ।

: ७ :

प्रकाश बाबू मिस केतकी को उनकी डिस्पेन्सरी पर छोड़कर अपनी कोठी पहुँचे, तो रानी सुशीला अपनी मुनियाँ बिल्ली को गोद में लिए सोफे पर बैठी थीं । प्रकाश बाबू, आकर ज्यों ही कमरे में खड़े हुए तो वह त्योरी चढा कर बोलों, “क्यों जी ! आप मेरे लिए इतना भी नहीं कर सके ?”

“तुम्हारे लिए ! क्या नहीं कर सका मैं तुम्हारे लिए रानी ?”

“क्या पचास हजार की बात थी ? ‘शून्य’ जी जीवन भर के लिए दास बन जाते । सभा में, सोसायटी में, कवि-सम्मेलनों में, न जाने कहाँ-कहाँ आपकी प्रतिष्ठा बढ़ाते । आपने केवल रुपये से ही स्नेह करना सीखा है ।”

“अनुमान तुम्हारा असत्य नहीं है रानी ! परन्तु तुम्हारे तो इंगित मात्र पर लाखों की सम्पत्ति न्यौछावर की जा सकती है । ‘शून्य’ जी जैसे कवि नित्य रुपये से न जाने कितने खरीदे जा सकते हैं ? मेरे सम्पर्क में आकर तुम्हें भी रुपये का मूल्यांकन करना सीखना चाहिए ।”

“तो जैसा आप चाहें कीजिए । मुझे क्या ? आपके विचार से तो मेरा जन्म ही धन लुटाने के लिए हुआ है । और धन संचित करने का अधिकार केवल आपको ही विधाता ने दिया है । धनवान पति निर्धनों की कन्याओं के साथ विवाह करके उन्हें इसी प्रकार ताना देते हैं । इसमें

आपका ही क्या दोष है ? दोष अपने भाग्य का है ।” कहकर सुशीला के नेत्रों से भर-भर करके अश्रुधारा बह चली ।

प्रकाश बाबू ने आगे बढ़कर सुशीला को अंक में भर लिया और प्यार से उसकी चिम्बुक पर दो उँगलियाँ रखकर मुख ऊपर को उठाते हुए नेत्रों में बेत्र डाल कर बोले, “रो पड़ीं । मैं पूछता हूँ विवाह के पश्चात् भी तुम्हारा उस दीवाने के प्रति दृढित होना क्या मेरे हृदय को छलनी नहीं बनाता ?”

“बनाता होगा, यह मैं जानती हूँ; परन्तु इसमें मेरा कोई दोष नहीं । अपराधी आप ही हैं, और रहेंगे भी । मैंने अपने जीवन की शतरंज पर आने वाले प्रत्येक मोहरे और उसकी चालों का पूरा व्योरा आपको देने के पश्चात् आपसे विवाह करना स्वीकार किया था । फिर प्रस्ताव भी आपका ही था । मैंने कोई धोखा नहीं दिया, कोई छल नहीं किया, कोई पाप नहीं किया ।”

“यह मैं मानता हूँ रानी ! परन्तु मन के लिए कभी-कभी यह विचार असहनीय-सा हो उठता है । मैं कवि को पचास हजार रुपये अवश्य दूँगा । रुपये मैं उसे देना चाहता हूँ, परन्तु अपने रुपये का ज़रा सा अंश भी उसके शरीर में प्रविष्ट कर देने के पश्चात् मैं उसे पूर्ण रूप से अपना दास बना लेना चाहूँगा; मेरी पूँजी का प्रत्येक पैसा मछिहारे का काँटा है । यह रुपया मैं कब और किस प्रकार दूँगा यह बात तुम मुझ पर छोड़ दो !”

सुशीला रानी ने प्रकाश बाबू की यह बात मान ली । ‘शून्य’ जी के लिए सुशीला के मन में वासनामय प्रेम इस समय वर्तमान नहीं था, परन्तु चिरकाल से हृदयों का सम्बन्ध कुछ ऐसा जुड़ गया था कि आमने-सामने होने पर पुराने वचन कानों में बज उठते थे । कभी-कभी रानी अपने इन्हीं वचनों को प्रकाश बाबू की वर्तमान इच्छाओं और परिस्थितियों पर परखने का भी प्रयास करती थी, तो प्रकाश बाबू उसकी दृष्टि में बिलकुल निर्दोष सिद्ध होते थे ।

मानव के मन की निर्बलताओं को ही रानी मानव की मानवीयता मानने लगी थी और जो व्यक्ति उसे इससे ऊपर उठाने की चेष्टा करता प्रतीत होता था उससे उसे घृणा होने लगती थी ।

प्रोफेसर सुधांशु के प्रति उसके हृदय में जो प्रथम बार घृणा का बीजांकुर उत्पन्न हुआ वह इसी भावना के आधार पर हुआ । सुशीला के मन में इस भावना को, अपनी दुर्बलताओं को छुपाने के लिए कविवर 'शून्य' जी ने भर दिया था और बाद में इसे गुरु-मंत्र मानकर रानी सुशीला ने अपने जीवन में स्थान दिया और इसी भावना को आधार मानकर रानी सुशीला ने कविवर 'शून्य' जी का मुँह बन्द करके प्रकाश बाबू को वरण किया ।

यह भावना रानी सुशीला के जीवन का एक प्रधान अंग बन चुकी थी और इसने उसे जीवन में खुलकर खेलने की स्वतन्त्रता दी थी । परन्तु प्रकाश बाबू को जो स्वतन्त्रता एक दिन सौन्दर्य की प्रतीक प्रतीत हुई वही आज उनके हृदय में ज्वाला सुलगाने लगती थी । 'शून्य' जी को पचास हजार रुपये प्रकाश बाबू यों ही दारू पीने और विजया छानने के लिए नहीं दे सकते थे । देश की सम्पत्ति को अनोत्पादक कार्य में व्यय करना उनकी दृष्टि से पाप था ।

प्रकाश बाबू अपने को राष्ट्र के निर्माण का एक महान् स्तम्भ समझते थे और उन्हें विश्वास था कि वह अपनी प्रतिभा के बल पर देश की उन्नति की वह रूपरेखा प्रस्तुत करेंगे, जिस पर चलकर भारत धन-धान्य से पूर्ण होगा और भारत में बड़ी-बड़ी मिलों और कारखानों का साम्राज्य स्थापित होगा ।

प्रकाश बाबू ने अपनी कल्पना का एक महल बनाया था और जीवन में यह निश्चय कर लिया था कि महरीली की सड़क पर जो स्थान उन्होंने लिया है उसके आस-पास की सब भोंपड़ियों को खरीद कर समाप्त कर दिया जायगा और वहीं अपने रहने का एक सात मंजिल का महल बनवाया जायगा । अपने प्रकार का यह एक ही महल होगा भारत में,

जिसकी सबसे ऊँची मंजिल में बैठकर प्रकाश बाबू अपने व्यापारों के सूत्रों को सँभालेंगे ।

प्रकाश बाबू का यह विचार रानी सुशीला को बहुत पसंद था और प्रकाश बाबू कभी-कभी जब एकान्त में बैठकर इस महल का काल्पनिक चित्र तय्यार करते थे तो रानी सुशीला उनके साथ बैठकर उसकी रूप-रेखा तय्यार कराने में पूरा सहयोग देती थी ।

“अब तो कई दिन से मिस केतकी दिखलाई नहीं पड़ रहीं ।” रानी सुशीला ने पूछा ।

“अवकाश न मिला होगा बेचारी को । मिल का कार्य इतना फैल गया है कि मुझे भी अवकाश नहीं मिला उधर जाने का । फिर वह तो अपने रोगियों के चक्कर में खाना भी भूल जाती है ।”

“खाने के समय आप क्यों नहीं पहुँच जाते वहाँ ? यदि उनका स्वास्थ्य खराब हो गया तो दावा आप पर ही किया जायगा ?” तिरछी दृष्टि प्रकाश बाबू के चेहरे पर डालकर सुशीला ने कहा ।

“मुझ पर ?” मुस्कराते हुए प्रकाश बाबू बोले ।

“जी हाँ, आप पर । आप लोग स्त्रियों के साथ खेल करते हैं ।” कहकर सुशीला ने अपना मुँह एक ओर को बिचका दिया ।

“और तुम पर नहीं, जो तुमने अपने विरह में कविवर ‘शून्य’ जी को कविता लिखने की एक मशीन ही बनाकर छोड़ दिया ।” मुस्करा कर प्रकाश बाबू बोले ।

“ठीक है ! मेरे व्यवहार ने कल्पना के परों को फड़फड़ाने का प्रवसर दिया, कवि की सोती हुई प्रतिभा को ललकार कर जगाया और उसकी सुप्त बीणा के तारों में झंकार पैदा कर दी । परन्तु कहीं ऐसा न हो कि आपके व्यवहार से बीखलाकर मिस केतकी अपने रोगियों के प्रापरेषन खराब करने लगें ।”

रानी के इन शब्दों पर प्रकाश बाबू रानी को दाद देकर उसकी

चतुर बुद्धि की प्रशंसा करते हुए हँस दिये और रानी का हृदय भी आनन्द-विभोर हो उठा ।

रानी एक हीरा थी, जिसकी परख 'शून्य' जी तथा प्रकाश बाबू, दोनों ने की, परन्तु हीरे को कोरा पारखी ही प्राप्त नहीं कर सकता । उसके पास मूल्य आँकने और चुकाने की क्षमता भी होनी चाहिए । उसी क्षमता पर रानी सुशीला ने अपने को कल्पना के क्षेत्र से दूर हटाकर वास्तविक क्षेत्र में रखकर प्रकाश बाबू को समर्पित कर दिया ।

रानी की यह दूरदर्शिता प्रकाश बाबू के लिए उसके जीवन का सबसे बड़ा गुण था । प्रकाश बाबू ने धीरे से पूछा, "क्या 'शून्य' जी यहाँ आये थे ?"

"यदि न आते तो ये सब बातें मैं किस प्रकार जान पाती ?"

"बेचारे बहुत निराश हुए जब मैंने ट्रस्ट की बात कही । परन्तु रानी ! मैं कहता हूँ कि ये लोग वास्तव में बड़े ही स्वार्थी हैं । मैं रुपया ट्रस्ट को देकर एक संस्था की स्थापना करना चाहता हूँ । इससे अन्त में चलकर 'शून्य' जी जैसे न जाने कितने कवि पलेंगे । परन्तु यह महा-शय अकेले ही पूरी पूँजी उड़ा देना चाहते हैं । तुम ही तनिक ठंडे हृदय से विचार करो कि क्या इन्हें यों ही यह पूँजी देदी जाय ?"

रानी सुशीला प्रकाश बाबू के मत से सहमत हो गईं और उन्हें वास्तव में कविवर 'शून्य' जी की कलात्मकता में धूर्तता और स्वार्थ के दर्शन हुए । समस्या को कई बार रानी ने अपने मन में दुहराया और अन्त में उसे यही विचार-संगत प्रतीत हुआ कि रुपये का ट्रस्ट बनाकर ही उनके सुपुर्द किया जाय और उस ट्रस्ट का संचालन पूर्ण रूप से प्रकाश बाबू के ही हाथों में रहे ।

दूसरे दिन 'शून्य' जी को रानी सुशीला के सामने झुक जाना पड़ा और वह एक शब्द भी उसके विपक्ष में न बोल सके । रानी के शब्दों पर उनके जीवन की प्रत्येक अमूल्य वस्तु न्यूँछावर थी । निश्चय यही हुआ कि इस ट्रस्ट का संचालन तो प्रकाश बाबू के ही आदेश से होगा

परन्तु कविवर 'शून्य' जी भी अपने जीवन को इसी ट्रस्ट के उत्थान में लगायेंगे ।

“जो कुछ अत्याचार तुम मुझ पर करना चाहती हो, करलो रानी ! मेरा तो जन्म ही सहन करने के लिए हुआ है । तुम मुझे खिलौना समझ कर मुझसे खेलना चाहती हो । तो खेलो, मैं कुछ नहीं कहूँगा ।” कहकर 'शून्य' जी और भी गम्भीर हो उठे और उन्होंने ट्रस्ट को आजीवन सहयोग देने का वचन दिया ।

“तब आप प्रसन्नतापूर्वक मेरी अनुमति से सहमत नहीं हैं ?”

“तुम्हारी अनुमति नहीं, आदेश है रानी ! और रही प्रसन्नता और अप्रसन्नता की बात, सो, वह तो मन की कल्पना मात्र है । भली से भली परिस्थिति में मन कष्ट की कल्पना कर सकता है और दुखद-से-दुखद परिस्थिति में आनन्द की कल्पना । मैं कवि ठहरा । कल्पना के ही बल से आकाश में दुर्ग बनाता हूँ । परन्तु रानी ! तुम्हें भी अपने रूप पर इतना अभिमान नहीं करना चाहिए । हमारी कल्पना रूप का भी निर्माण कर सकती है ।”

सुशीला लज्जित होकर बोली, “कवि ! अब तुम बहकने बहुत लगे हो ।”

“आज्ञा जो दी हुई है आपने ।”

“परन्तु यह ठीक नहीं है । मैं अब किसी की पत्नी हूँ ।”

“जानता हूँ, परन्तु मानता नहीं ।” शून्य जी ने स्थिरता के साथ अपने नेत्र रानी के मुख पर गड़ा कर गम्भीरता पूर्वक कहा । “स्वार्थ जीवन का आवश्यक अंग है और उससे ही संसार में व्यक्तियों का जीवन संचालित होता है । परन्तु उसी को जीवन का प्रधान तत्व मानने पर जीवन नीरस हो जाता है । जीवन उस नीरस परिस्थिति में अधिक दिन नहीं चल सकता ।”

इतना कहकर बिना इस बात की प्रतीक्षा किये कि रानी उसकी बात का क्या उत्तर देगी 'शून्य' जी वहाँ से उठकर चल दिये ।

शून्य जी सीधे मिस केतकी की डिस्पेन्सरी में पहुँचे। जाकर देखा मिस केतकी स्वयं कम्पाउण्डर के स्थान पर खड़ी दवाइयाँ बना रही थीं।

“आज यह कष्ट आपने कैसे किया ?”

“बेचारा कम्पाउण्डर बीमार पड़ गया। उसका कार्य भी मुझे ही करना पड़ रहा है।”

‘शून्य’ जी डिस्पेन्सरी के अन्दर घुस कर बोले, “लाइए मुझे दीजिए यह सब मैं किये देता हूँ।”

“आप !” आश्चर्य चकित होकर मिस केतकी बोलीं।

और सचमुच ही ‘शून्य’ जी ने प्रेसक्रिप्शन हाथ में लेकर खटाखट दवाई बनानी प्रारम्भ कर दीं। फिर धीरे से बोले, “यह कार्य मेरे लिए नया नहीं है मिस केतकी ! मेरे कवि बनने का श्रेय इसी कम्पाउण्ड्री को है।”

दवाइयाँ बनाने के पश्चात् बहुत देर तक दोनों की बातें होती रहीं और बातों का विषय भी बदल कर रानी सुशीला और प्रकाश बाबू पर पहुँच गया। मिस केतकी ने पूछा, “क्या आपके विचार से दोनों का जीवन इस समय एक ही विचार-धारा द्वारा संचालित हो रहा है ?”

“यदि जीवन के मोटे रूप पर दृष्टि डालकर देखा जाय तो यही कहना होगा।”

“और यदि सूक्ष्म दृष्टि डाली जाय, तब ?”

“तब.....तब के विषय में मैं अभी कुछ नहीं कहना चाहता। अनुभव आपका भी मुझसे कुछ कम नहीं है। प्रकाश बाबू को जितने निकट से आपने परखा और देखा है उतने निकट से मैं नहीं परख पाया हूँ। परन्तु इतना सत्य है कि दोनों के जीवन में स्वाभाविक आकर्षण की अपेक्षा बाहरी खिचाव अधिक है।”

“यही तो मैं पूछना चाहती थी ‘शून्य’ जी ! रानी प्रकाश बाबू का मूल्यांकन करने में असफल रही। उसने व्यक्ति का मूल्य न आँक कर घन को जीवन का लक्ष्य बनाया।”

“यह नई बात नहीं है मिस केतकी ! रानी ने जो कुछ भी किया है वह ठीक ही किया है। उसने प्रकाश बाबू से विवाह करके मुझे प्रेरणा दी है। नारी के चरित्र को समझने का दृष्टिकोण प्रदान किया है।”

“परन्तु जो दृष्टिकोण नारी-चरित्र के अध्ययन का रानी से आपको प्राप्त हुआ है वह आपके विचारों की निर्बलता है।”

“जिसे आप निर्बलता समझ रही है वही मेरे जीवन का बल है, मेरे जीवन की अनुभूति है।”

“दुर्बल प्राणी इसी प्रकार कल्पना का आश्रय लेकर बातें करते हैं। बलवान प्रकाश बाबू हैं, जो करना चाहने से पूर्व कर डालते हैं, और आप करने की इच्छाओं से ही परास्त होकर कविता लिखने बैठ जाते हैं। आपके जीवन की पराजय का नाम आपकी कविता है। कभी-कभी व्यक्ति अपनी पराजय के गान गाकर भी प्रसन्न होता है। इस प्रकार की कविताएँ लिखकर आप निराशावाद को जन्म देना चाहते हैं, जो राष्ट्र के उत्थान में बाधक सिद्ध होगा। आपकी ये कविताएँ कुछ नहीं हैं, केवल रानी के न मिलने पर आपकी आत्मा का प्रलाप मात्र है।”

“आपके अनुमान को चुनौती देना मैं नहीं चाहता, परन्तु यदि मेरी कविता को यह भी मान लिया जाय तब भी व्यक्ति के जीवन की यह उन परिस्थितियों का स्पष्टीकरण है कि जिनमें से होकर प्रत्येक स्त्री-पुरुष को गुजरना पड़ता है। जितनी स्पष्ट बात आपने कही है यदि उतनी ही मैं भी कहने का साहस करूँ तो मैं कह सकता हूँ कि प्रकाश बाबू के इस विवाह से आपके हृदय को गहरी चोट लगी है। परन्तु इस संसार के कुछ व्यक्तियों को विधाता ने केवल दूसरों को दण्ड देने के ही लिए बनाया है।”

मिस केतकी ने कविवर ‘शून्य’ जी की इस बात का कोई उत्तर नहीं दिया। वह एक रोगी को देखने में हो व्यस्त हो गई। रोगी की दशा बहुत खराब थी। मिस केतकी ने मरीज को पूरी तरह देखा परन्तु रोग की जाँच न कर सकी।

“नहीं पहिचान सकीं, लो मैं बतला देता हूँ।” कहकर शून्य जी ने रोगी को अन्दर के कमरे में लेजाकर लिटाने को कहा। रोगी के सभी सगे-सम्बन्धी बाहर चले आये। कविवर ‘शून्य’ जी मिस केतकी के साथ अंदर जाकर बोले, “भूख व्यक्ति को, वह चाहे किसी भी वस्तु की क्यों न हो, पूरी न होने पर जला डालती है।”

रोगी ने ‘शून्य’ जी के मुख पर देखते हुए कहा, “आपने मेरे मन की बात कह दी महाशय ! मेरे घर वालों ने मुझे दवा पिला-पिला कर पागल बना दिया है। मैं भूख से मर रहा हूँ और ये लोग इसे रोग समझते हैं। सब लोग मेरी खटिया को घेरे बैठे रहते हैं। रोग-रोग कहकर इन लोगों ने मुझे रोगी बना दिया है।”

“तब क्या आप वास्तव में रोगी नहीं हैं ?”

“फिर वही बात। रोगी भी कई प्रकार के होते हैं। इन्हें आप अपने यहाँ एक कमरे में रख लीजिए और मेरा विचार है कि यह बहुत शीघ्र स्वस्थ हो जायेंगे।”

रोगी कुछ नहीं बोला और उसके सगे सम्बन्धी उसे वहीं छोड़ कर चले गये। चलते समय रोगी की माता ने केवल इतना अवश्य कहा, “डाक्टरनी जी ! मेरा इकलोता पुत्र है यह; यदि आप बचा लेंगी तो सोने से तोल दूँगी। धन की चिन्ता नहीं, चिन्ता इसके प्राणों की है।”

“चिन्ता न कीजिए माजी ! मैं अपनी करनी में कुछ उठा न रखूँगी।” और कविवर ‘शून्य’ जी ने तो बुढ़िया को शत-प्रति-शत आश्वासन देदिया कि रोगी अवश्य अच्छा हो जायगा।

विदा होते समय ‘शून्य’ जी ने धीरे से मिस केतकी के कान के पास मुख लेजाकर कहा, “जानती हैं यह रोगी रूप का भूखा है। इसलिए इसकी देख-रेख आप स्वयं करना। स्वस्थ यह अवश्य हो जायगा।”

मिस केतकी ने कोई उत्तर नहीं दिया और ‘शून्य’ जी चले गये।

: ८ :

प्रोफेसर सुधांशु की योजनाएँ ग्रामीण जनता के सहयोग से पनपनी प्रारम्भ हो चली थीं। ग्राम की चौपाल ग्राम के सब रहने वालों ने आपको सौंप दी थी। वह अब एक सुन्दर और सुव्यवस्थित पाठशाला बन चुकी थी और उसके एक ओर एक छोटा सा कमरा भी बन गया था, जहाँ एक छोटी डिस्पेन्सरी (दवाखाना) खुल गई थी। मिस केतकी दोपहर के समय, जब उन्हें अपने कार्य से अवकाश मिलता था, वहाँ दो घंटे के लिए बैठती थीं और ग्रामवासियों की चिकित्सा करती थीं।

इस विद्यालय और चिकित्सालय की ख्याति आस-पास के सब देहातों में फैल चुकी थी। दूर-दूर से विद्यार्थी तथा रोगी यहाँ पर आते और अपने लक्ष्य की प्राप्ति कर आनन्द लाभ करते।

प्रोफेसर सुधांशु नीम की छाया में लकड़ी के तख्त पर चटाई बिछाए बैठे कुछ फाइलों को इधर-उधर पलट रहे थे। तभी सामने से नियाज़ अहमद आकर बोले, “मैंने कहा, फाइलों में क्या देख रहे हो?”

“अरे आगये नियाज़ अहमद ! मैं तो अभी-अभी तुम्हारी ही राह देख रहा था। तुम्हें यह जानकर प्रसन्नता होगी कि कल संध्या की सार्वजनिक सभा में हमारी बस्ती के सब चमंकार भाईयों ने दारू न पीने की सौगन्ध ले ली है ? और अभी-अभी मैं तुम्हें जो अपनी नई योजना बतलाने जा रहा हूँ उसे सुनकर तो तुम उछल ही पड़ोगे।”

“तनिक सुनूँ भी तो वह कौन सी योजना है आपकी।” कहते हुए वह प्रोफेसर सुधांशु के पास ही चप्पल उतारकर तख्त पर बैठ गये।

“नियाज़ अहमद ! अब मेरी योजनाओं का आर्थिक रूप तुम्हारे सम्मुख आयागा। मैंने यहाँ तीन जूते बनाने के केन्द्र स्थापित किये हैं और उन तीनों केन्द्रों को मिलाकर एक ‘सहयोगी केन्द्र’ बनाया है। उसका रजिस्ट्रेशन तुम्हें कराना होगा। हमारी यह सोसायटी प्रतिदिन पचास जोड़ी जूते तय्यार कर सकेगी और ये जूते बाजार में बेचने पर हमें एक रुपया प्रति जोड़ा लाभ होगा।”

“बहुत खूब, बहुत खूब ! भय्या ! कमाल कर दिया तुमने । इन-कलाब आजायगा इस गाँव के जीवन में । बेचारे अच्छे-खासे कारीगर होने पर भी शहर में जाकर सड़कों के चौरस्तों पर बैठे पुरानी जूतियाँ गाँठने से छुटकारा पा जायेंगे । एक नई जिंदगी देखने को मिलेगी इन लोगों को । ये लोग समझ सकेंगे कि ये भी इन्सान हैं । इनकी स्त्रियों और इनके बच्चों की दशा को देखने से आँखों में आँसू आ जाते हैं । नियाज अहमद की बाँछें खिल उठीं ।

इसी समय मिस केतकी की कार वहाँ पर आ पहुँची और कार से केतकी के साथ कविवर ‘शून्य’ जी भी उतरे । दोनों चौपाल की सीढ़ियों से ऊपर चढ़कर सीधे तख्त के पास पहुँच गये । उन्हें देखकर प्रोफेसर सुधांशु मुस्कराते हुए बोले, “अरे ! ‘शून्य’ जी को भी घसीट लाईं मिस केतकी ! तुम भी बड़ी विचित्र हो । किसी के समय का मूल्यांकन करना, मानो तुमने सीखा ही नहीं । जो तुम्हारे जाल में फँस गया, सो फँस गया ।”

“भय्या सुधांशु ! आपने बिल्कुल ठीक कहा । अपनी तो हम जानते हैं कि इनसे छुट्टी प्राप्त करना अपने तो वश की बात है नहीं ।”

“परन्तु प्रोफेसर सुधांशु ! आप निलिप्त प्राणी हैं । मैं देखता हूँ कि इनका आप पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता । रही मेरी हानि की बात; सो आपको मेरा यहाँ पर आना यदि खटक रहा है; तो मैं चला जाता हूँ ।” और शून्य जी उठकर खड़े हो गये ।

“रूठ चले । प्रकाश बाबू को आपने वचन दिया है कि वह चाहे कुछ भी कहें आप कभी उसका बुरा नहीं मानेंगे और यहाँ तनिक सी बात पर रुष्ट हो गये ।”

‘शून्य’ जी, “रूठ होने की बात नहीं है मिस केतकी ! यह कलाकार का अपमान है । कलाकार अपमान सहन नहीं कर सकता ।” आँखें तरेरते हुए ‘शून्य जी’ बोले ।

नियाज अहमद ने व्यंग्य-पूर्ण स्वर में कहा “शून्य जी ! शायद नहीं

जानते कि हम इस ग्राम में कलाकार अपने उत्तम चर्मकारों को कहते हैं। जो सबसे अच्छा जूता बनाता है वही सबसे अच्छा कलाकार है।”

“सुना आपने कुछ मिस केतकी ! मैं जानता था कि आप इसीलिए मुझे यहाँ लाई है। परन्तु इससे मैं अपना मार्ग नहीं बदल सकता। मैं कलाकार हूँ, और आपके इन आघातों का उत्तर आपको कविता द्वारा ही दूँगा।” कहकर ‘शून्य’ जी ने अपने सूखे बालों के गुच्छे को दो उँगलियों से ऊपर को फेंकते हुए मस्तक पर हाथ फेरा।

‘शून्य’ जी का यह कहना था कि तीनों व्यक्ति खिल-खिला कर हँस पड़े और फिर उन्होंने ‘शून्य’ जी को सम्मान के साथ तख्त पर बिठलाया। ‘शून्य’ जी शेरवानी के बटन खोलते हुए, तख्त पर बैठ गये।

शेरवानी के बटन खोलने पर अन्दर का रेशमी कुर्ता देखकर नियाज अहमद बोले, “क्यों उस्ताद ! आज तो मार दिया पापड़ वाले को ?”

“आपका अनुमान गलत है। कुर्ते रानी ने बनवाये हैं, प्रकाश बाबू ने नहीं।” इस समय ‘शून्य’ जी के मुख पर मुस्कान की स्निग्ध रेखाएँ अंकित हो रही थीं।

“रानी एक पहेली है मिस केतकी !” प्रोफेसर सुधांशु ने गम्भीर मुख-मुद्रा बनाकर कहा। “नियाज अहमद ! तुम सम्भवतः नहीं परख पाये हो उस पहेली को। विचित्र बात यह है कि वह हमारे ‘शून्य’ जी को धोखा देने के पश्चात् भी धोखा नहीं दे पा रही है। वह स्वयं धोखा खा रही है।”

“इसका मतलब ?” सिर खुजलाते हुए नियाज अहमद ने पूछा।

“मतलब स्पष्ट है नियाज भय्या !” केतकी ने कहा, “व्यक्ति के आकर्षण के विषय कई हो सकते हैं। एक व्यक्ति विविध दिशाओं में भी आकर्षित हो सकता है। बाज़ार में जाँये तो कितनी ही वस्तुओं को उनके विविध गुणों के आधार पर पसंद करेंगे, परन्तु मानव ने अपनी सभ्यता की कुछ ऐसी सीमाएं बना ली हैं कि जिन्होंने व्यक्ति की स्वतंत्रता को सीमित भी कर दिया है।”

“आज तो आप फ़िलासफी की बातें कर रही हैं केतकी बहन ! हम तो सच कहते हैं कि हमारे पल्ले बिलकुल कुछ नहीं पड़ा ।”

“यह नहीं समझ पाँयगे मिस केतकी !” मुस्कराते हुए नियाज़ अहमद को नितांत मूर्ख समझ कर ‘शून्य’ जी बोले । “इनका सम्बन्ध मस्तिष्क से नहीं है और फिर यहाँ तो कल्पना, भावना और विचार का एक सूत्र में गठबंधन हुआ है । इसे समझना किसी मदिरा अथवा विदेशी कपड़े की दूकान पर धरना देना नहीं है ।” कहकर उन्होंने गर्व के साथ अपना सीना उभार कर नियाज़ अहमद की ओर देखा ।

“शून्य जी ने बिलकुल ठीक कहा केतकी बहन ! मैं मोटी बातों को ही समझता हूँ । एक से विवाह करके दूसरे को प्रेम करने की क्षमता भी किसी स्त्री में होती है, यह कल्पना मैं तभी कर सकता हूँ जब मेरे साथ भी रेशमी कुर्ते सिलाने वाली किसी देवी का प्रेम हो जाय ।” और वह इतना कहकर गम्भीर हो गये ।

मिस केतकी रोगियों को देखने लगीं तथा प्रोफेसर सुधांशु और नियाज़ अहमद अपने कार्य में लग गये । ‘शून्य’ जी अकेले चबूतरे पर घूम-घूम कर गाँव का दृश्य देखने लगे । थोड़ी देर में वह सिर खुजलाते हुए प्रोफेसर सुधांशु के सम्मुख आकर बोले, “प्रोफेसर साहब ! आपने तो जंगल में मंगल कर दिया । मकान कच्चा ही है, परन्तु बहुत कलात्मक ढंग से बना हुआ है । यहाँ की स्वच्छता में जो कुछ भी गंदगी है वह सामने स्पष्ट दिखलाई दे जाती है । धनवानों की भाँति यहाँ मखमली कालीनों के नीचे दबाकर वर्षों की गंदगी को नहीं जोड़ा जाता ।”

प्रोफेसर साहब उनकी बातें अनसुनी करके अपने काम में लगे रहे । वह कुछ लिख रहे थे और जो कुछ वह लिखते जा रहे थे नियाज़ अहमद उसे टाइप करते जाते थे ।

कविवर ‘शून्य’ जी उनकी उदासीनता पर ध्यान न देकर फिर चौपाल पर चले गये । गाँव के बच्चों को इस विचित्र प्रकार के अस्त-व्यस्त व्यक्ति को देखने में बहुत आनन्द आया और उनका जमाव कविवर के

चारों ओर उसी प्रकार बढ़ता गया जिस प्रकार भालू, रीछ वाले, जादू-गर या मदारी के चारों ओर हो जाता है। जिस गली से भी वह निकले गाँव के बच्चों ने उनका स्वागत किया। आज इन प्राकृतिक बच्चों के बीच में चलते हुए उन्होंने ऐसा अनुभव किया कि मानो वास्तव में यदि आवरण-विहीन जीवन कोई है तो वह यही है, उसका यही रूप है।

यह चर्मकारों की बस्ती थी और उन्हीं के ये बच्चे थे। वस्त्रों के स्थान पर केवल दस प्रतिशत के पास गले में कुर्त्ता था और वह भी फटा हुआ। कच्छा अथवा नीकर किसी के पास नहीं था, हाँ कुछ आयु के बड़े बच्चों ने काली तगड़ी में किसी कपड़े की लँगोटी अवश्य लगाई हुई थी। लड़कियों के पास लड़कों से अधिक वस्त्र थे, परन्तु उनके भी सिरों पर ओढ़नियाँ नहीं थीं, हाँ सूतनें और कुर्त्तों सब के पास थीं।

‘शून्य’ जी ने यह प्रकृति का जीता-जागता स्वरूप देखा तो इसके सम्मुख उन्हें प्रकाश बाबू की प्रदर्शनी हेय प्रतीत हुई और उनके वे कलात्मक चित्र जिन्हें उन्होंने बड़े-बड़े रियायती नवाबों के दाँत खट्टे करके मोल लिया था, नगण्य दिखलाई दिये। कवि के हृदय की भावना जागृत हो उठी और उसने तुरन्त सब बच्चों के बीच में बैठ कर कविता सुनानी प्रारम्भ कर दी।

मिस केतकी रोगियों को दवा देकर आई तो प्रोफेसर साहब ने पूछा, “कविवर ‘शून्य’ जी किधर गये?”

“अभी-अभी तो यहीं थे।”

“गाँव की सैर कर रहे होंगे। कवि ही जो ठहरे। शायर लोगों की मत पूछिए। इनका मन विचित्र होता है। जीवन में कोई मजबूत इरादा बनाना ये जानते ही नहीं। बस स्त्री इनकी मौत है, मौत?” नियाज़ अहमद बोले।

“यह किस प्रकार?” मिस केतकी ने पूछा।

“यह किस प्रकार, यह मैं नहीं जानता केतकी बहन! परन्तु जो कुछ मैंने देखा है, वह कह रहा हूँ। औरत को देखकर शायर की

हिम्मत पस्त हो जाती है, औरत के बोलने पर वह धिधियाने लगता है और औरत के डाँटने पर उसकी आँखों से आँसुओं की धारा बह निकलती हैं। बस यही है इनकी शायरी ?”

“ऐसा नहीं है भय्या नियाज़ ! तुमने अभी कवि का बाहरी रूप ही देखा है। कवि की आत्मा को परखने का प्रयत्न नहीं किया। ‘शून्य’ जी प्रतिभाशाली व्यक्ति हैं और वह अब प्रकृति की वास्तविक विभूतियों के दर्शन करने गये हैं।”

तीनों ने देखा कि ‘शून्य’ जी एक वृक्ष की जड़ पर बैठे थे और गाँव भर के बच्चे उनके चारों ओर एकत्रित हो गये थे।—“कविता कर रहे हो कवि।” प्रोफेसर सुधांशु ने मीठे और सघे हुए स्वर में पूछा।

“आप आगये प्रोफेसर सुधांशु ! मानव-जाति के बाल-जाल की प्रथम किरणों से घिरा हुआ आज मैं यह अनुभव कर रहा हूँ कि वास्तव में सृष्टि के आदि में प्राणी की क्या दशा रही होगी। कितना भोलापन है इन बच्चों में प्रोफेसर साहब ! मानो प्रकृति अपना सरल रूप धारण करके इनके अङ्ग-अङ्ग से लिपट गई है। आपने यह स्थान अपने कार्य-क्षेत्र के लिए चुनकर वास्तव में अपने भावुक हृदय और तीव्र-बुद्धि का परिचय दिया है।”

“और आपने प्रकाश बाबू की कोठी के आउट-हाउस में अपना प्रकाशन-दफ्तर बनाकर किस चीज़ का परिचय दिया है कवि ?”

‘शून्य’ जी ने नियाज़ अहमद की बात अनसुनी कर दी और फिर धीरे-धीरे अपने ही लिखे हुए कागज़ पर देख कर गुन-गुनाने लगे।

“क्या अब यहाँ से चलने का विचार नहीं है कवि ! मेरा समय समाप्त हो चुका। देर हो जाने से मेरा संध्या का कार्य-क्रम नष्ट हो जायगा।”

“चलता हूँ।” कहकर ‘शून्य’ जी खड़े हो गये और फिर चारों व्यक्ति पाठशाला के निकट आगये। मिस केतकी और ‘शून्य’ जी ने

कार में बैठकर विदा ली और प्रोफेसर सुधांशु तथा नियाज अहमद ग्राम के जूता बनाने वाले केन्द्रों को देखने चले गये ।

: ६ :

प्रकाश बाबू के मिल का उद्घाटन हुआ, शानदार उद्घाटन । शानदार । कई हजार रुपया व्यय हो गया । बड़े-बड़े लोगों में ह्विसकी का दौर चला और छोटे-छोटों ने केवल चाय की प्यालियों पर ही संतोष कर लिया ।

आज बैरिस्टर पुण्डरीकर तथा सरदार लुहारासिंह का बड़ा रीब था । बैरिस्टर पुण्डरीकर ने ही लिमिटेड कम्पनी के कागज तय्यार किये थे । सरदार लुहारासिंह के कुशल-विज्ञापन ने प्रकाश बाबू की योग्यता का ढिंढोरा पीटा था । शेयर बेचने का प्रधान श्रेय उन्हीं को था ।

सरदार लुहारासिंह बोले, “मानते हो न ! सेठ पोद्दार को वह चित्त लाया कि बच्चा जीवन भर याद रखेगा !”

“और हमारे कानूनी दाव-पेंचों की सराहना नहीं करोगे कि जो एक बार फँसा-सो-फँसा ।”

“सराहना क्यों नहीं करूँगा बैरिस्टर साहब ! ये सब हथकंडे तो आपके ही सिखलाये हुए हैं । मैं तो आपको गुरु मानता हूँ ।”

“ये हथकंडे वास्तव में कमाल के हैं सरदार जी ! आप जैसा योग्य व्यक्ति ही इनका सही-सही प्रयोग कर सकता है । मैं मुक्त कंठ से आप की सराहना करता हूँ । कल प्रकाश बाबू से सुशीला रानी के सम्मुख आपके विषय में मेरी बातें हो रही थीं ?”

“क्या बातें हो रही थीं ?”

“मैंने स्पष्ट कह दिया कि सरदार लुहारासिंह जी की कार्य-कुशलता का लोहा आपको मानना ही चाहिए ।”

“प्रकाश बाबू ने क्या कहा ?”

“कहना क्या था ? लोहा मानना ही पड़ा, और रानी सुशीला ने भी आपकी बहुत प्रशंसा की ।”

“सच !”

“सच नहीं तो क्या झूठ ? तुमने आज कहा है कि तुम मुझे गुरु मानते हो और मैं एक लम्बे काल से तुम्हें शिष्य मान कर तुम्हें दावपेच सिखाता आ रहा हूँ ।” कहकर पुण्डरीकर ने बोतल की कार्क तोड़ कर मेज पर रखे हुए दोनों गिलासों को ऊपर तक लबालब भर दिया ।

दौर पर दौर चलने लगा और मस्ती में झूम-झूम कर सरदार जी इस एकांत कमरे में पंजाबी गाना गाकर नाच उठे । लाहौर से दिल्ली आने के पश्चात् आज जी खोलकर ह्विस्की पीने को मिली थी लुहारा सिंह जी को । प्रकाश बाबू की दरियादिली की इस समय वह मुक्त कंठ से सराहना कर रहे थे ।

“सेठ पोद्दार के साथ प्रकाश बाबू का वह एग््रीमेन्ट करा दिया है कि क्या मजाल जो बच्चा एक छदाम भी निकाल कर ले जा सके । कुछ दिन तो रुपये को बढ़ता देखकर आत्मसंतोष की भावना से यों ही फूलता रहेगा परन्तु जब उसे अपनी वास्तविक परिस्थिति का ज्ञान होगा तो असम्भव नहीं कि विष खाकर प्राण त्यागने पड़ें उसे ।”

“मर जाने दो बैरिस्टर ! सैंकड़ों कीड़े-मकौड़े रोज मरते हैं । हमने मरने वाले का साथ देना नहीं सीखा । हम तो जीना और जीने वाले के साथी हैं ।”

“बहुत खूब, सरदार जी ! बहुत खूब ! हमारे और आपके विचारों में साम्य है । हम दोनों के शरीर विधाता ने दो अवश्य बनाये हैं, परन्तु विचार दोनों के एक हैं ।”

दौर-पर-दौर चले । मदिरा का खुमार धीरे-धीरे बढ़ता जा रहा था और दोनों के मस्तिष्क रंगीनियों की ओर आकर्षित होते जा रहे थे । अपने जीवन की रंगीनियों का पहला इतिहास खोल-खोल कर

एक ने दूसरे के सामने रखा और फिर विषय रानी सुशीला और मिस केतकी पर जा पहुँचा ।

“प्रकाश बाबू ने भी जीवन की रंगीनियों को खूब परखा हैं सरदार साहब ! आकर्षण ही विशेष है उनमें । रुपया और स्त्री दोनों उनकी ओर इस प्रकार खिंचे चले आते हैं जैसे मिष्ठान पर चींवटियाँ ।”

“यह सब पैसे की करामात है बैरिस्टर साहब ! प्रकाश बाबू तो फिर भी कुछ अक्ल और शक्ल रखते हैं । हमने काले कलूटे और बद-शक्ल गधों पर हूर की परियों को लट्ठ होते देखा है । पैसा इस संसार का दूसरा परमेश्वर है ! उसके बल से चाहे तो इन्द्र के अखाड़े की परियों को भी प्रकाश बाबू अपनी कोठी के बगीचे में नचा सकते हैं ।”

“तुम गधे हो सरदार जी, गधे !”

“क्या कहा ?” शराब का गिलास मेज पर रखते हुए, नेत्रों की पुतली लाल करके, सरदार जी बोले, “मुझे आपने गधा कहा ; परन्तु मैं आपको गुरु मान चुका हूँ । आप कह सकते हैं । खैर, आप कह सकते हैं ।” और सरदार जी का क्रोध शांत हो गया ।

पुण्डरीकर ने भी अपने को गुरु के आसन पर ही आरूढ़ करते हुए इस ‘गधे’ शब्द का प्रयोग सरदार जी के लिए कर दिया था; परन्तु उनका रूप बदलता देखकर उनके होश उड़ने लगे थे । एक बार तो उनके मन में यहाँ तक आया था कि भाग खड़े हों, परन्तु वह जानते थे कि सरदार जी से तेज वह नहीं भाग सकते, इसीलिए रुक गये । अन्त में सरदार जी को इस प्रकार शांत देखकर उन्हें तनिक शान्ति मिली ।

“आपके साथ बातें करना भी खतरे से खाली नहीं है सरदार जी !” लम्बे श्वाँसों को सँभालते हुए बैरिस्टर साहब बोले ।

“जी ! एक तो आपका इतना बड़ा अपमान-सूचक शब्द ‘गधा’ मैंने सहन किया और उसपर भी आप कहते हैं कि मुझसे आपको खतरा है । बैरिस्टर साहब ! जीवन में पहली बार झगड़ बैठने का निश्चय करके आज मैं शांत हुआ बैठा हूँ । नहीं तो अब तक.....”

“बोतलें आपस में बजने लगतीं, पुलिस आ जाती और हम दोनों को हवालात में बन्द होना पड़ता । प्रकाश बाबू हमें जमानत पर छोड़ा कर लाते—और जब अदालत के सम्मुख यह रहस्य खुलता कि भगड़े का मूल कारण मेरा सरदार जी को ‘गधा’ कहना था तो तुम निश्चित समझलो कि अदालत के रजिस्टर में तुम्हारा ‘गधा नाम’ दर्ज हो जाता ।”

इसी समय सामने से रानी सुशीला आती दिखलाई दीं । दोनों शराब की बोतलें छुपाने का प्रयत्न करने लगे । सुशीला देखकर मुस्कराते हुए बोली, “छुपाने का प्रयत्न न करो सरदार जी ! मैं जानती हूं कि तुम जैसे साहसी कार्यकर्ता बिना मदिरा के नहीं रह सकते और पुण्डरीकर जैसे विचारक भी मदिरा के सहयोग से ही अपनी गम्भीर विचार धारा को संतुलित रखते हैं ।”

कह कर सौन्दर्य की प्रतिमा स्वरूप रानी उनके सम्मुख खड़ी होकर इतने आकर्षण से मुस्कराई कि दोनों मन्त्र-मुग्ध हो गये । “जी खोल कर पी लो मदिरा ! ऐसा दिन जीवन में बार-बार नहीं आता । तुम लोगों के सहयोग से आज प्रकाश बाबू ने जिस अंगूरों की बेल को बो दिया है उसके अंगूरों से प्रार्थना करो कि इससे भी मादक मदिरा तय्यार हो और उसे पीकर न केवल तुम बल्कि पूरा भारत आनन्द-विभोर हो उठे । यह मिल, जिसकी स्थापना आज की गई है, हमारा नहीं राष्ट्र का है, तुम्हारा है, और हम सब उसके सेवक हैं । आप लोगों की ही भाँति हम भी इसके कर्मचारी मात्र हैं ।”

“हम अपने जीवन को प्रकाश बाबू के कार्य में जुटा देंगे । आप विश्वास रखें रानी ! हमारे जीवन का लक्ष्य उचित और अनुचित का ज्ञान भुलाकर प्रकाश बाबू और आपकी सेवा करना होगा ।”

“तो फिर मदिरा की सरिता बह निकलेगी तुम्हारे जीवन में ।” यह कहकर एक इठलन के साथ वहाँ से सुशीला रानी चल दीं ।

कविवर ‘शून्य’ जी का स्वागत आज विशेष रूप से किया गया ।

इनके स्वागत के लिए प्रकाश बाबू ने रानी सुशीला को नियुक्त किया। मदिरा पान से उनका गला और गले से निकलने वाले स्वर में मिठास और आकर्षण आ गया था। कवि अपनी धुन में गुनगुना रहा था।

“यह प्लॉट प्रकाश बाबू ने आपके लिए ही तय्यार कराया है। इस पर ‘शून्य’-शाला का निर्माण होगा और उस ‘शून्य’-खाला में ‘शून्य’-ट्रस्ट की स्थापना की जायगी। यह ‘शून्य-ट्रस्ट’ भारत में ही नहीं, विश्व में, ‘शून्य’ जी की कला-कृतियों का प्रसाद करेगा !” सुशीला रानी ने कहा।

“संसार स्वरमय हो उठेगा। मूक विश्व को मैं वाणी प्रदान करूंगा; प्रकाश जैसे गधे का नाम विश्व के कोने-कोने में पहुँचा दूँगा।”

“फिर वही शब्द प्रयोग किया आपने प्रकाश बाबू के लिए। केवल कविता अधूरी है और पैसे को भी मैं सर्व शक्तिमान नहीं मानती। प्रकाश बाबू अपने पैसे के सम्मुख संसार को गधा समझते हैं। और आप.....”

“और...आप हम दोनों को गधा समझती हैं।” कहकर ‘शून्य’ जी खिलखिला कर हँस पड़े।

“मैं दोनों का यथा स्थान सम्मान करती हूँ। जब मैं आप लोगों की ये बातें सुनती हूँ तो मुझे इस उन्नति में अवनति के खंडहर दृष्टि-गोचर होने लगते हैं और प्रोफेसर सुधांशु के शब्द कानों में बज उठते हैं।”

इसी समय सामने से प्रकाश बाबू के साथ प्रोफेसर सुधांशु आते दिखलाई दिये और उन्हें देखकर दूर से ही ‘शून्य’ जी नमस्कार करते हुए बोले, “प्रोफेसर साहब ! आपकी आयु बहुत बढ़ी है। अभी-अभी रानी सुशीला आपका ही नाम ले रही थीं।”

“मेरा नाम !”

“हाँ हाँ ! आपका ही नाम। यह कहती हैं कि आपका स्थान इनकी दृष्टि में भगवान् कृष्ण से भी अधिक है। भगवान् कृष्ण ने गीता

द्वारा आपस में कट-मरने का संदेश दिया था और आप शांति पूर्ण उपायों द्वारा संघर्ष को मिटा कर प्रगति की स्थापना करना चाहते हैं। यह मुग्ध है आपके सिद्धान्त पर; परन्तु मेरी समझ में आपका सिद्धान्त नहीं आता। मैं प्रगति का मूल स्रोत संघर्ष को मानता हूँ।”

“आपके विचार प्रकाश बाबू के विचारों से मिलते हैं कवि ! इसलिये मेरी सानुरोध आपसे प्रार्थना है कि आप प्रकाश बाबू के इस महान् यज्ञ में सहयोग दें। राष्ट्र के उत्थान में आप लोगों का यह महान् प्रयास सफल हो, यह मेरी हार्दिक कामना है। मेरा सैद्धान्तिक मतभेद आप लोगों से रहने पर भी सहानुभूति आपके साथ है, और यह सर्वदा बनी रहेगी।”

“हमें आपसे यही आशा थी।” शून्य जी बोले।

“परन्तु मेरा तो दिल तोड़ दिया आपने प्रोफेसर सुधांशु ! जब मैं अमेरिका से चला था तो मैंने वहाँ अपने एक मित्र से कहा था कि कार्य-संचालन के लिए मेरे एक मित्र हैं जिनका सहयोग प्राप्त करके मैं अपने लक्ष्य में सफल न हो सकूँ, यह असम्भव है। आज आपको न पाकर मैं अपने को एकाकी सा अनुभव कर रहा हूँ। कितना अच्छा होता यदि इन शुभ कामनाओं के साथ आप मेरा कार्य-संचालन-भार सँभाल लेते।”

“अपनी असमर्थता के लिए मैं हृदय से खेद प्रकट करता हूँ प्रकाश बाबू ! सैद्धान्तिक एवम न होने पर मैं सही कार्य-संचालन नहीं कर सकता। मेरी और आपकी नीति में आकाश-पाताल का अन्तर है। जो कार्य दो नीतियों द्वारा संचालित किया जाता है उसमें बनने की अपेक्षा बिगड़ने की अधिक संभावना रहती है। आशा है आप मेरी शुभ कामनाएँ मात्र ही स्वीकार करेंगे।”

“आज के इस शुभ समारोह में मिस केतकी की अनुपस्थिति मुझे बहुत खल रही है प्रकाश बाबू ! क्या उन्हें निमंत्रित न करके”

“उनका क्या है ? आ गया होगा कोई रोगी ।” मुँह बनाकर प्रकाश बाबू बोले ।

इसके पश्चात चारों व्यक्तियों ने एक ही स्थान पर बैठ कर चाय पी और चाय पर भी इधर-उधर की गप्पें चलती रहीं । प्रकाश बाबू ने अमेरिका में सीखे हुए अपने नये-नये सिस्टम बतलाने प्रारम्भ किये ।

“वहाँ भोजन बिना हाथ से छुए डिब्बों में बन्द हो जाता है । उनकी स्वच्छता का क्या कहना है प्रोफेसर साहब ! क्या मजाल जो कहीं किसी वस्तु पर एक मक्खी या मच्छर बैठ जाये । भारत में तो मक्खियों को जिमाया जाता है । उनके लिए थाल परस कर रख दिये जाते हैं ।”

“यह दोष अशिक्षा का है । हाथ से भोजन बनाने का इससे क्या सम्बन्ध ?”

प्रोफेसर साहब तथा प्रकाश बाबू को बातें करते अधिक देर नहीं हुई थी कि सामने से मिस केतकी की कार आती हुई दिखलाई दी । कार आकर सामने रुक गई और उसमें से मिस केतकी तथा नियाज अहमद उतर पड़े ।

“कभी समय पर आना तो मिस केतकी ने सीखा ही नहीं प्रोफेसर साहब !” बातें प्रोफेसर साहब से कर रहे थे परन्तु व्यंग-वाण का लक्ष्य मिस केतकी ही थीं ।

“यह रिमार्क मैं पास नहीं कर सकता प्रकाश बाबू ! क्यों कि मेरे अनुभव आपके अनुभवों से प्रथक हैं । मिस केतकी में किसी भी अवसर पर, वचन और कार्य के महत्व को आँकने की अपनी स्वतंत्र-क्षमता है और उसे चेलेंज नहीं किया जा सकता ।”

“आपके कथन की मैं तारीफ करता हूँ ।”

“परन्तु आप लोगों के कहने और तारीफ करने का यह अर्थ नहीं कि प्रकाश बाबू जो कुछ कह रहे हैं वह असत्य है । प्रकाश बाबू के कथन का मैं समर्थन करती हूँ ।” कहकर मिस केतकी धीरे से मुस्करा दीं ।

“परन्तु कोरा समर्थन ही तो सब कुछ नहीं है मिस केतकी ! समय पर न आकर आपने उत्सव का रंग फीका कर दिया । रानी सुशीला और कविवर ‘शून्य’ जी अभी-अभी गये हैं । बैरिस्टर पुण्डरीकर और सरदार लुहारासिंह के नेत्र रह गये आपकी राह देखते । इनके अतिरिक्त भी न जाने कितने आगंतुकों ने आपकी प्रतीक्षा की । फिर अन्त में सब दुखी हृदय तथा प्यासे नेत्र लेकर ही विदा हुए ।” प्रकाश बाबू बोले ।

“समय पर न आने का मुझे वास्तव में खेद है । मैं ज्यों ही रेलवे-लाइन के फाटक पर आई कि चपरासी ने फाटक बन्द कर दिया । तभी एक एक्सीडेंट हो गया । एक ग्वाला अपनी गाय को बचाता हुआ रेलगाड़ी की चपेट में आ गया । भगवान् की दया से उसके प्राण बच गये । उसी अवस्था में ही उसे उठा कर मुझे हस्पताल ले जाना पड़ा । इसीलिए आने में देर हो गई । मैं समझती हूँ कारण जानकर आपके हृदय का रोष कुछ हलका हो गया होगा ।”

“इसमें रोष कम होने का आपने क्या कारण प्रस्तुत किया ? भारत की जन-संख्या बढ़ती जा रही है । एक ग्वाले के मरजाने से कौन कमी आने वाली थी भारत की जन-संख्या में ? मैं ऐसी बातों को बहाना मात्र गिनता हूँ, और कुछ नहीं ।” प्रकाश बाबू बोले ।

मिस केतकी ने कोई उत्तर नहीं दिया । प्रोफेसर सुधांशु ने भी उसे अनसुनी करके टाल दिया । परन्तु नियाज अहमद के हृदय को ठेस लगी । उनके मन में घृणा का संचार हुआ । वह बोले कुछ नहीं परन्तु वहाँ बैठना उनके लिए कठिन हो गया । खड़े होकर बोले, “अच्छा प्रकाश बाबू ! अब चले । आपकी हाजरी देनी थी, सो दे दी ।”

“जा रहे हो नियाज ! चलो, मुझे भी चलना है । ;अच्छा प्रकाश बाबू ! मुझे भी आज्ञा दीजिए । फिर किसी दिन भेंट होगी । ईश्वर करे आप अपनी योजनाओं में फलीभूत हों । मेरी शुभ कामनाएँ आपके साथ हैं ।” प्रोफेसर सुधांशु गले ।

“जा रहे हैं आप भी ! जाइए, परन्तु कोरी शुभकामनाएँ ही देकर आप इस प्रकार भाग नहीं सकते ।” प्रकाश बाबू बोले ।

“भागने वाली बात नहीं है प्रकाश बाबू ! यदि मेरा सैद्धान्तिक मत-भेद न होता तो मैं सहर्ष आपके कार्य में हाथ बैटाता ।”

दोनों चले गये । प्रकाश बाबू और मिस केतकी में इधर-उधर की बातें चलती रहीं और फिर प्रकाश बाबू ने उन्हें अपना समस्त प्लान तथा नक्शे इत्यादि दिखला कर प्लाटों की सीमाएँ दिखलाईं । मिस केतकी को यह सब देख कर बहुत प्रसन्नता हुई । प्रकाश बाबू की योग्यता और कार्य-व्यवस्था को देखकर उसके हृदय में एक उमंग भरी आशा की लहर दौड़ गई । इस वीरान पड़े मैदान में उसने देखा कि एक जग-मगाती हुई दुनियाँ नज़र आ रही थी । एक स्वप्न का संसार उसके नेत्रों में उतर आया । उसने देखा कि बड़े-बड़े बाज़ार हैं, सिनेमा घर है, बाल-रूम है, होटल हैं, रेस्टोरेन्ट हैं, डांसिंग रूम हैं, क्लब हैं, पार्क हैं, जीवन का स्वच्छन्द-विहार है, नर-नारियों के आनन्द-मग्न जोड़े इधर-उधर इठला-इठला कर बल खाते हुए घूम रहे हैं—स्वर्ग है । परन्तु अभी यह सब वीरान मैदान था ।

: १० :

प्रोफेसर सुधांशु नियाज़ अहमद को साथ लेकर सड़क के दूसरी ओर उस ग्राम में जा पहुँचे जहाँ उनकी योजनाएँ प्रसारित हो रही थीं । इस ग्राम का नाम प्रोफेसर साहब ने टाँडा खेड़ी से बदल कर बनस्थली रख दिया था और यह नया नाम उस ग्राम-वासियोंको बहुत पसंद आया था ।

“नियाज़ भय्या ! परमात्मा की असीम अनुकम्पा से हमारी ‘बन-स्थली-शू-कॉपरेटिव-सोसाइटी’ बहुत अच्छा कार्य कर रही है । हमारे यहाँ के माल की खपत अब केवल देहली में ही नहीं है, वरन् बाहर के

नगरों में भी होने लगी है। कुछ व्यापारी हमारे माल की एजेन्सी लेना चाहते हैं। अभी कल ही एक बड़े व्यापारी मेरे पास से आये थे।”

“मैं इसमें कोई हानि नहीं समझता। ये व्यापारी यदि कुछ रुपया एडवांस कर सकें तो हमें यह अवश्य कर लेना चाहिए। एक मुश्त रुपया हाथ में आजाने से हम फेक्ट्री की कुछ विशेष आवश्यक चीजें खरीद सकते हैं और सिलाई की मशीनें भी बढ़ाकर अपने माल की तय्यारी में बढ़ोतरी कर सकते हैं। कच्चा माल भी हम एक साथ ला सकेंगे। हमारा बहुत सा समय बच जायगा और हम उसे किसी अन्य योजना पर लगा सकेंगे।”

“तुम्हारा विचार ठीक है। सोसाइटी की अंतरङ्ग-सभा बुलाकर उसके सम्मुख यह प्रस्ताव रख दो। मैंने एक डेयरी फार्मिंग की योजना भी तय्यार की है जिसके द्वारा हम दिल्ली-नगर वासियों को शुद्ध मक्खन, घी और दूध दे सकेंगे।”

“योजना तो अच्छी है, परन्तु इसके लिए पूँजी कहाँ से पायेंगे। भैंसें खरीदने के लिए रुपये की जरूरत होगी। फिर मक्खन तय्यार करने के लिए मशीनें भी लेनी होंगी।”

“इस समस्या का हल मैंने खोज निकाला है। हम ‘बनस्थली-कॉपरेटिव-डेयरी-फार्मिंग’ स्थापित करके उसके कुछ शेयर बेचेंगे। यदि उन शेयरों के रुपये से पूरा न हुआ तो ‘बनस्थली-शू-कॉपरेटिव-सोसाइटी’ से ऋण लेने की व्यवस्था करेंगे और यदि तब भी काम न चला तो हमें शहर के कुछ बड़े-बड़े दूध के दूकानदारों को अपनी सोसाइटी के सदस्य बनाकर उन्हें संगठन में लायेंगे। यह योजना मैं पूरी कर चुका हूँ। केवल सोसाइटी के कागजात तय्यार करके उसका रजिस्ट्रेशन करना शेष है।”

नियाज अहमद ने आनन्द-विभोर होकर प्रोफेसर सुधांशु को कौली में भरकर ऊपर उठा लिया। “भय्या ! तुम्हारा दिमाग भी वह काम करता है कि जिसे.....”।

“बस रहने दो अधिक प्रशंसा करने को । तुम पहली ही बस से कागजात लेकर लौट जाओ और किसी प्रकार आज अथवा कल तक इसे रजिस्टर्ड करलो ।”

दोनों सज्जन बातें करते हुए बनस्थली पहुँच गये । वहाँ जाकर प्रोफेसर साहब ने कुछ कागज नियाज अहमद को दिये और नियाज अहमद उन्हें लेकर उल्टे ही पाँव शहर की ओर चल दिये ।

गाँव के इस स्कूल में अब एक सौ पचास बच्चे शिक्षा प्राप्त कर रहे थे, और उन सभी के पहनने के वस्त्र भी साफ़ थे । बच्चों के बैठने के लिए जमीन पर चटाईयाँ बिछी थीं । अध्यापकों के बैठने के लिए मूढ़ों का प्रबन्ध था । चार प्रथक-प्रथक श्रेणियों के लिए चार कमरे थे । प्रोफेसर सुधांशु ने बहुत शीघ्र दौड़-धूप करके इस विद्यालय को सरकारी सहायता भी दिला दी थी और इसकी शेष आवश्यकताओं को पूरी करने का भार ‘बनस्थली-शू कॉन्फेरेटिव-सोसाइटी’ ने अपने ऊपर ले लिया था । स्कूल के बच्चों को पुस्तकें भी बिना मूल्य के सोसाइटी द्वारा ही देने की व्यवस्था की गई थी ।

दोपहर को छुट्टी में बच्चों को नाश्ता दिया जाता था और संध्या को उनके खेलने के लिए चार सुन्दर मैदानों की व्यवस्था की गई थी । फुटबाल तथा जमनास्टिक का वहाँ सुन्दर प्रबन्ध था । एक और कबड्डी खेलने का मैदान था और दूसरी ओर मल्ल-युद्ध की शिक्षा देने के लिए तीन अखाड़े थे ।

बनस्थली के रहने वालों को अपनी आय में स्थिरता दिखलाई देने लगी थी और उनके जीवन का स्तर भी ऊँचा होता जा रहा था । जिस विद्यालय में दिन के अन्दर बच्चों को शिक्षा दी जाती थी वहीं पर संध्या को प्रोढ़ व्यक्तियों के लिए समाज-शिक्षा का प्रबन्ध किया गया था । संध्या को यहाँ लगभग दो सौ व्यक्ति शिक्षा प्राप्त करने आते थे । दैनिक समाचारों में भी वे रुचि रखते थे ।

बनस्थली के खान-पान में अच्छे घी-दूध की व्यवस्था के लिए प्रोफेसर साहब ने डेयरी की योजना तय्यार की थी। उन्हें विश्वास था कि 'बनस्थली-डेयरी-फार्मिङ्ग-सोसाइटी' का कार्य संचालित होने पर निश्चित रूप से उनके स्वप्न साकार हो उठेंगे।

दोपहर बारह बजे का समय हो गया। मिस केतकी की कार सामने से आती दिखलाई दी। अपने चिकित्सालय में जाने से पूर्व पाँच मिनट के लिए प्रोफेसर सुधांशु के तख्त के पास मूढ़ा डालकर बैठीं। वह बोलीं "आज आपने अवश्य सराहना की होगी प्रकाश बाबू की योजनाओं की। सुन्दर प्लानिंग है। जिस दिन यह विशाल योजना फलीभूत होकर कार्य-रूप में परिणित होगी तो वास्तव में यहाँ का रूप-रंग बदल जायगा। आपकी योजनाएँ उनके सामने बचकानी सी प्रतीत होंगी।" कहकर बाँये हाथ की दो उँगलियों से मुख-कमल पर मँडराने वाली लटों को उठा कर कान पर डाल लिया।

प्रोफेसर सुधांशु एक पुस्तक पढ़ रहे थे। पुस्तक से दृष्टि हटाकर मुस्कराते हुए बोले, "केतकी ! कवि ने कितना सुन्दर लिखा है, "चाइल्ड इज फादर आफ़ दी मैन" बच्चा जब स्वयं एक दिन अपनी शक्तियों को संगठित करके प्रौढ़ बनेगा तभी उसमें वास्तविक शक्ति का संचार होगा यदि यों ही एक दिन में हाड़-माँस का पुतला बना कर तय्यार कर दिया जाय तो क्या....."

मिस केतकी मुस्कराती हुई चिकित्सालय की ओर चल दीं। मिस केतकी ने श्रौषधालय की ओर दो चार पग ही रखे थे कि प्रोफेसर साहब बोले, "तुम्हें मेरी बात पसन्द नहीं आई मिस केतकी ! परन्तु जो कुछ मैंने कहा है इसमें मेरा कुछ नहीं है। देखलो पुस्तक में कविता की व्याख्या इसी प्रकार की गई है।"

"व्याख्या लौटते समय देखूँगी। रोगी मेरी प्रतीक्षा कर रहे हैं।" कहकर मिस केतकी श्रौषधालय में चली गईं।

इस गाँव की स्त्रियों की सबसे बड़ी बीमारी भूत-प्रेतों की थी। जिस

स्त्री को भूत चढ़ जाता था वह नाचने-गाने लगती थी, कभी दाँत किट-किटाती थी और कभी अचेत हो जाती थी, कभी हँसती थी और कभी रोने लगती थी। गाँव से दो मील दूर मंदिर में एक भगत रहता था।

उपचार के लिए उसे ही बुलाया जाता था और यह मस्तक पर लम्बा टीका लगा कर गले में जूतियों की माला पहन कर उछलता कूदता हुआ भूत से युद्ध कर उस स्त्री के केश पकड़ कर भँझोड़ता था और इस प्रकार युद्ध में भूत को परास्त करके उसे भगाता था। जोर-जोर से थालियाँ बजाई जाती थी और भगत मदिरा-पान करके मस्ती में उस स्त्री को भूत के बहाने खूब भँझोड़ता था।

आज एक ऐसी ही रोगिणी की सूचना मिस केतकी को मिली। नई बहू के सिर भूत आया हुआ था। सास और ससुर का विचार भगत को बुलाकर भूत उतरवाने का था परन्तु पति सहमत न हुआ और वह सीधा मिस केतकी के पास आया। मिस केतकी ने रोगिणी को जाकर देखा तो उसे हिस्टीरिया का दौरा था।

यह भूत नहीं है, एक बीमारी है। स्त्रियों को हो जाती है। आप मेरे साथ चलकर औषधालय से औषधि ले आइए, यह ठीक हो जायगी।

दवा से वह स्त्री सचेत हो गई। इस बहू के सचेत होजाने से मिस केतकी की ख्याति आस-पास में बिजली की भाँति फैल गई और बहुत से लोगों को विश्वास हो गया कि ये सब बीमारियाँ होती हैं जिन्हें भूत-परेत कहकर ढोंगी लोग सरल जनता को धोखा देते हैं।

मिस केतकी औषधालय का कार्यक्रम समाप्त करके जब प्रोफेसर सुधांशु के पास आईं तो प्रोफेसर साहब बोले—“हाँ मिस केतकी ! तो क्या उस पुतले में जीवन के दर्शन तुम कर सकोगी ? वह अन्दर से खोखला है। जो वस्तु अन्दर से खोखली है उसमें बल नहीं होगा, केवल ऊपर की टीप-टाप मात्र रहेगी। मैं पूछता हूँ क्या तुम वास्तव में सिद्धांत रूप से मेरे मत से सहमत नहीं हो ?”

“आपके मत से सहमत न होती तो आपकी योजना में सक्रिय

सहयोग किस प्रकार दे पाती ? इधर कुछ दिन से तो मेरा विचार यह हो रहा है कि मैं अपना चिकित्सालय यहीं बना लूँ और देहली में प्रेक्टिस करना बन्द कर दूँ ।”

“सच ? क्या वास्तव में सच कह रही हो मिस केतकी ? तुमने मेरे मुख की बात छीन ली । तुमने मेरे मन की भावना को परख लिया । मैं कह नहीं सकता, मुझे कितनी प्रसन्नता हुई है इस समय तुम्हारी यह बात सुनकर ।”

“मैं कई दिन से विचार कर रही हूँ कि देहली जैसे विशाल नगर में तो डाक्टरी-सहायता मिलने के अन्य भी न जाने कितने साधन हैं, परंतु यहाँ देहात में कोई अवसर आ पड़े, तो इन बेचारों का क्या बनता होगा किसी व्यक्ति का केवल इस लिए मर जाना कि उसे समय पर डाक्टरी सहायता न मिल सकी, कितनी दुखद है ? मुझे यहाँ के वातावरण में कुछ ऐसा आनन्द आने लगा है कि दिल्ली की भीड़-भाड़ अप्रिय प्रतीत होती है ।”

“वह जीवन वास्तव में अशांत है ! और यहाँ चारों ओर प्रकृति का सुन्दर, सुखद, शीतल और आशा-प्रद वायु-मंडल फैला हुआ है । जीवन की शृंखलाएँ जो वहाँ जकड़ी हुई हैं, यहाँ उनमें स्वतन्त्रता है । मानव के विकास का कार्य-क्रम यहाँ जितना स्वच्छन्दता प्राप्त कर सकता है उतना वहाँ दुर्लभ है । वहाँ मनुष्य की विचार-शक्ति का धीरे-धीरे ह्लास होने लगता है और जीवन में हृदय-हीनता आ जाती है ।

प्रकाश बाबू की योजनाओं का लक्ष्य वही है, जिससे ऊब कर तुम्हारे मन में यहाँ आने की उत्कंठा उत्पन्न हुई । प्रकाश बाबू की योजना मानव-समाज का वर्गीकरण करके उसकी शक्तियों का अपव्यय संघर्षों द्वारा करने को आवाहन देती हैं । यह योजना की रूप-रेखा दूषित है और उसमें जो महत्वाकांक्षाएँ पल रही हैं उनके फलीभूत करने में जिन साधनों का जिन-जिन रूपों में प्रयोग किया जाता है, और किया जायगा

वे राष्ट्र के उत्थान में बाधक होंगे, सहायक नहीं। मैं इसे निर्माण की योजना नहीं मानता। यह योजना भारत में बेकारी को जन्म देगी।”

मिस केतकी ने अनुभव किया कि प्रोफेसर सुधांशु के कथन में एक सैद्धान्तिक सत्य है। यह योजना सब की भलाई में अपनी भलाई की कल्पना करती है, सबके सहयोग में अपना सहयोग चाहती है, सबकी उमंगों और आकांक्षाओं में अपने भविष्य के सुख-स्वप्नों की आशा करती है, भारत की प्राचीन परम्परा का यह निखरा हुआ रूप है। प्रकाश बाबू की योजना का रूप सुन्दर होने पर भी हृदय कलुषित है।

“प्रोफेसर साहब ! समझ काम नहीं देती। आप लोगों की योजनाओं का सम्बन्ध राजनीति से है। मानव-हितों को सामने रखकर उनके अंतर में क्या छिपा है इसका सही-सही अनुमान लगाना मेरे लिए कठिन हो रहा है। मैं सोचती हूँ कि व्यर्थ के इन झमेलों में न फँसकर अपना कार्य करूँ। मेरे काम में निश्चित रूप से मानव-समाज की सेवा निहित है।

“निःसन्देह मिस केतकी ! तुम चाहो तो मानव-सेवा का वह ज्वलंत उदाहरण प्रस्तुत कर सकती हो कि जिसके सम्मुख बड़ी-बड़ी योजनाएँ फीकी पड़ जायें। तुम्हारी योजना मेरी योजना का एक अभिन्न अंग है। मैं चाहता हूँ कि इन आस-पास की बस्तियों का कायाकल्प हो जाय और इनका नव-निर्माण सहयोग तथा प्रेम की भावना को लेकर हो। क्या दे सकोगी तुम सहयोग मेरी इस योजना में ?”

“निश्चित रूप से।” केतकी ने गम्भीरता पूर्वक कहा।

“तो चलो मैं तुम्हें वह स्थान दिखा दूँ जो मैंने तुम्हारे हस्पताल के लिए रखा है।”

मिस केतकी प्रोफेसर सुधांशु के साथ उठ कर चल दीं।

मिस केतकी के पग एक विशेष उमङ्ग के साथ उस दिशा में उठ रहे थे। वह मुस्करा कर बोलीं, “तब क्या आपने पहले से ही अपने मन में धारणा बनाली थी कि मैं आपके प्रस्ताव को मान लूँगी ?”

“अब यह मेरा प्रस्ताव मेरा नहीं है मिस केतकी।” कहते हुए प्रोफेसर साहब ने घूम कर देखा।

“हाँ, मेरा ही है अब तो। मेरा मन कुछ ऊब-सा उठता है कभी-कभी प्रोफेसर साहब ! और जब मन ऊबता है तो वह सीधा बनस्थली की ओर दौड़ता है। इस लिए कल मैंने विचार किया कि मैं बनस्थली में ही जाकर क्यों न रहने लगूँ ?”

“तुमने सुन्दर विचार किया केतकी ! तुम्हारे यहाँ आजाने से यहाँ की स्त्रियों में जाग्रति का संचार होगा और मेरे विचारों का सही दृष्टिकोण उनके पास तक पहुँचने लगेगा।”

जो स्थान प्रोफेसर साहब ने मिस केतकी के लिए चुना था वह उन्हें बहुत पसन्द आया। स्थान वास्तव में रमणीक था। मकान कच्चा ही था, परन्तु बहुत स्वच्छ तथा सुथरा बना हुआ था। दीवारों की लिपाई चिकनी मिट्टी से कराकर उसपर कलई करा दी थी। वह सीमेंट की कोठी सा प्रतीत होता था।

“अरे ! यह तो आपने बँगला बनवा डाला मेरे लिए।”

“और नहीं तो क्या ? प्रकाश बाबू यदि महल बनवा सकते हैं तो क्या हम एक साधारण-सा कच्चा मकान भी नहीं बना सकते हैं। यह मकान कच्चा अवश्य है, परन्तु गाँव के लोगों ने मिलकर बड़े प्रेम से बनाया है।”

“कच्चा ! क्या वास्तव में यह कच्चा मकान है ? तब तो खूब बनाया है। बनस्थली के वे लोग मेरी बधाई के पात्र हैं जिन्होंने मेरी आँखों को धोखा दिया।”

“और मैं उनकी ओर से बधाई तुमको देता हूँ कि तुमने उनके इस प्रेमोपहार को इतने सम्मान के साथ स्वीकार किया।”

मिस केतकी लजाकर कुम्हलाई-सी मन-ही-मन प्रसन्न होकर बोलीं कुछ नहीं। ँड़े उत्साह तथा हर्ष के साथ उस मकान का कोना-कोना घूम कर देखा। उसके सामने का बागीचा, जिसमें सुन्दर सी फुलवाड़ी वहाँ

के बच्चों ने लगाई थी, वह भी देखी और यह सब देखकर उनकी आत्मा प्रसन्न हो गई ।

: ११ :

रानी सुशीला के नाम प्रकाश बाबू ने अपने कलाथ-मिल के दस लाख रुपये के शेयर कर दिये और इसके अतिरिक्त दो लाख रुपया नकद भी उसे दिया । रानी सुशीला के मन में अधिकाधिक धन प्राप्त करने की प्रबल आकांक्षा थी । कुछ दिन प्रोफेसर सुधाशु की टोली में रहकर कांग्रेसी बाना धारण कर, नाम, पद और धन की प्रतीक्षा में भी रानी ने समय व्यतीत किया था, परन्तु जब कांग्रेस द्वारा प्रस्तावित मंत्री-पद को भी प्रोफेसर सुधाशु ने अस्वीकार कर दिया और प्रोफेसरी को भी लात मार दी, तो उस ओर से रानी को निराश होकर अन्य दिशा में अपनी महत्वाकांक्षाओं के लिए पर फैलाने पड़े । कला और कला द्वारा पिस-पिस कर गरीबों में केवल छिछली साधारण सी ख्याति के आश्रय पर श्री 'शून्य' जी द्वारा अपने जीवन को संचालित होता हुआ वह नहीं देख सकती थी ।

रानी सुशीला एक अमूल्य रत्न थी, इस सत्य में इन्कार प्रोफेसर सुधाशु और कविवर 'शून्य' जी भी नहीं कर सके थे । रत्न के पारखी प्रकाश बाबू तो रत्न-संचय करने वाला अपने को भारत का एकाकी व्यापारी मानते थे और अब तो इस सत्य को मानने में रानी सुशीला को भी कुछ संदेह नहीं था ।

“रानी ! तुमने सुना । कल प्रकाश बाबू को जब मैंने तुम्हारी कविता सुनाई, तो वह आनन्दविभोर हो उठे और उन्होंने कहा 'शून्य' जी तुरंत इस रचना को प्रकाशित करने और भारत के कोने-कोने में पहुँचाने के लिए एक पत्रिका प्रकाशित करो ।” ‘शून्य’ जी बोले ।

“सच !”

“सच नहीं तो क्या झूठ ?”

“फिर आपने क्या कहा ?”

“मैंने क्या कहा ? तुम नहीं समझ सकतीं रानी ! मैंने क्या कहा होगा । मैंने जो कुछ कहा, वह ठीक ही कहा होगा । मुझे इस समय स्वयं स्मरण नहीं कि मैंने क्या कहा । मैं कल्पना के संसार में खो गया और तुम्हारा वह सुनहला चित्र मेरे नेत्रों के सामुख उतर आया जिसमें तुम वीणा लिए मेरी भावना के तारों पर अपनी कोमल उँगलियाँ धीरे-धीरे फेर रही थीं । वह चित्र रानी ! छप कर जब उस पत्रिका में प्रकाशित हुआ तो संसार ने कविता का चित्र देखा और कवि की आत्मा ने अपनी सफलता को चुमकारा । मैं अपने आपे में नहीं था उस समय रानी ! मैं क्या उत्तर देता ?”

‘शून्य’ जी के लिए एकांत स्थान उपलब्ध था और उसमें जिस किस्म की भी मदिरा वह पीना पसन्द करते थे, प्रस्तुत की जाती थी । ‘शून्य’ जी अथवा किसी भी कलाकार या नेता को मदिरा पिलाने में रानी सुशीला को विशेष आनन्द आता था । वह जानती थी कि इन लोगों की अनुभूति को जाग्रत करने के लिए मदिरा-पान नितान्त आवश्यक है । पहले भारत में विजया और सोम-रस का पान होता था, परंतु आज का युग पहले से प्रगतिशील हो चुका था । विजया में प्रगति नहीं, आलस्य है, शिथिलता है, विचार है पर उत्साह नहीं । और धर्म-ग्रंथ लिखने का युग समाप्त हो चुका ।

बातों का विषय बदल कर मदिरा और विजया पर ही आ टिका ।

‘शून्य’ जी बोले, “आओ मैं तुम्हें आज प्रोफेसर मुधांशु की योजना दिखला कर लाता हूँ । तुम भी मान जाओगी उस व्यक्ति के व्यक्तित्व को ।”

“यदि न मानती तो क्या यों ही दो वर्ष उनके सम्पर्क में व्यतीत करती ? परन्तु यह मैं नहीं मान सकती कि बिला धन के कोई कार्य हो

सकता है। जीवन के प्रत्येक अंग को पुष्ट करने के लिए धन की आवश्यकता होती है।”

कविवर ‘शून्य’ जी ने रानी सुशीला की इस बात को अनसुनी करते हुए कहा, “प्रोफेसर सुधाशु राष्ट्र-निर्माण का जो ढाँचा प्रस्तुत कर रहे हैं वह मानव-जीवन की असमानताओं को नष्ट करके उसे समान स्तर पर लायेगा। चलो न ! देर हो रही है।”

“देर !”

“हाँ देर रानी ! आज वह अपनी नई योजना का उद्घाटन कर रहे हैं। प्रकाश बाबू और तुम्हें निमंत्रित किया था। प्रकाश बाबू नहीं जा सकेंगे। वह मुझे कह गये हैं कि...”

“परन्तु प्रोफेसर साहब को मेरे पास स्वतंत्र निमंत्रण भेजना चाहिए था।” आँखें धुमाकर सुशीला ने कहा।

‘शून्य’ जी मुस्करा कर बोले, “यह वास्तव में भूल हुई प्रोफेसर सुधाशु से। भविष्य में उन्हें ऐसा ही करने को कहा जायगा।”

रानी सुशीला मुस्कराती हुई अपने कमरे में चली गई। शीघ्र ही ठाट-बाट के साथ बन-ठन कर बाहर निकलीं। घंटी बजा कर चपरासी को बुलाया और ड्राइवर को पोर्टिंगो में कार लाने का आदेश दिया।

इनकी कार जब बनस्थली में पहुँची तो वहाँ का रूप-रंग बदला हुआ था। बनस्थली अब एक ग्राम न रहकर साधारण-सा क़सबा बनता जा रहा था। यहाँ के रहने वालों की सभी आवश्यकताओं के अनुसार कॉपरेटिव स्टोर्स खुल जाने से एक छोटा सुन्दर सा बाजार बन गया था और मकान कच्चे अवश्य थे परन्तु सफाई में पक्कों को भात कर रहे थे। आज यहाँ विशेष चहल-पहल थी और कुछ सम्मानित नगर के रहने वाले भी इधर-उधर घूम रहे थे।

‘शून्य’ जी तथा रानी सुशीला का नियाज़ अहमद ने आगे बढ़कर स्वागत किया और उन्हें आदर के साथ मञ्च पर ले गये। प्रोफेसर सुधाशु और केतकी भी वहाँ बैठे थे। रानी सुशीला के पहुँचते ही मंच

पर काना-फूँसी होनी प्रारम्भ हुई। एक ने कहा, “यही हैं भाई ! वह रानी सुशीला जिन्होंने विवाह तो प्रकाश बाबू के साथ किया है परन्तु यह रहती इन्हीं महाशय ‘शून्य’ जी के साथ हैं।”

“यह ‘शून्य’ जी कौन हैं ?”

“यह कवि हैं, कलाकार हैं, मस्त प्राणी हैं। पहले फटे ढाल, बाल बिखराये, चप्पल घसीटते हुए दिल्ली की गलियों में चक्कर लगाया करते थे, परन्तु आजकल इनकी न पूछो। सुना है मदिरा का खुमार चौबीसो घण्टे टूटता ही नहीं। खुमार पर मदिरा और मदिरा पर खुमार सवार रखते हैं।”

“सुना है अब तो कार से उतर कर पैदल चलना भी यह अपनी मानहानि समझते हैं।”

“नहीं यार ! व्यर्थ की उड़ाने से क्या मिलता है ? बेचारा भावुक कवि है। इसे न शान की चिन्ता है, न मोटर की, न कोठी की और न प्रकाश बाबू के धन सम्पत्ति की। यह तो कला का पुजारी है और रानी सुशीला इसकी कला की अनुभूति है। यों ही संसार में सभी को दोषी नहीं ठहराना चाहिए। व्यर्थ अनंगल बकवास करने से क्या लाभ ?”

“बकवास ! हमारा कथन बकवास है और आपका सिद्धांत, न्याय, दर्शन ? मैं पूछता हूँ कहाँ लिखा है कि प्रकाश बाबू के साथ विवाह कर लेने के पश्चात् रानी सुशीला को इन महाशय की ‘अनुभूति’-पात्री बना रहना चाहिए ? क्या इसे आप न्याय-संगत समझते हैं ? क्या इसे आप समाज के लिए विष नहीं मानते ? हम घृणा करते हैं इस प्रकार के व्यक्तियों से। रुपया इनके पास भले ही चाहे जितना क्यों न हो परन्तु हम सम्मान की दृष्टि से इन्हें नहीं देख सकते।”

“परन्तु आपकी दृष्टि से ही तो संसार का संचालन नहीं होता महाशय ! विश्व प्रगति की ओर बढ़ रहा है। क्या आप इस प्रगति को रोक सकते हैं ? महाशय ! यह तूफान है, तूफान। ये प्रगति के थपेड़े तुम्हारा

मुँह तिरछा कर देंगे। तुम सामने आने का प्रयत्न करोगे तो कुचल दिये जाओगे। संसार को अभी बहुत आगे बढ़ना है और उस बढ़ती हुई गति में तुम्हारी रूढ़ियाँ उपहासस्पद सिद्ध होंगी।”

पहले महाशय कुछ कहने को ही थे कि प्रोफेसर सुधांशु ने पास आकर धीरे से पूछा, “प्रकाश बाबू नहीं आये?”

“वह कलकत्ता गये है। कोई बड़ा सौदा करना था और आज की उसकी अन्तिम तिथि थी। बयाना पहले ही दिया जा चुका था।” रानी सुशीला बोली।

“ठीक है। आप आगईं तो उनका स्थान रिक्त नहीं रहा?”

“परन्तु आपने आज मेरे लिए ‘आप’ शब्द का प्रयोग क्यों किया, यह मैं समझ नहीं पा रही हूँ। रिक्त स्थान मैंने भर दिया, इसमें कोई सन्देह नहीं, परन्तु यह शब्द आपने व्यंग्य-स्वर में उच्चारण किया है या साधारण स्वर में, यह मैं समझना चाहती हूँ। इसे अपमानसूचक समझने की घृष्टता तो मैं कर नहीं सकती।”

“आप शब्द का प्रयोग मैंने बहु वचन में इस समय तुम्हें प्रकाश बाबू और रानी सुशीला मान कर किया है।” कहकर प्रोफेसर साहब मुस्करा दिये।

“वाक-चातुर्य की पटुता का सुन्दर उदाहरण आपने प्रस्तुत किया है प्रोफेसर साहब! देखी रानी! तुमने प्रोफेसर साहब की कलाकारिता। संध्या-समय यही तो मैं कह रहा था।”

“तो यों कहिए कि आप लोग मेरी पीठ पीछे भी बुराइयाँ करते रहते हैं।” मुस्कराते हुए मिस केतकी की ओर मुँह करके सुधांशु बोले, “सुना तुमने केतकी! प्रकाश बाबू नहीं आये। मैं जानता हूँ कि वह क्यों नहीं आये, परन्तु इस समय के व्यावहारिक संतोष के लिए मैं रानी सुशीला की ही बात पर विश्वास कर लेता हूँ।”

रानी सुशीला ने अभी-अभी जो झूठ बोला था वह उसके मन में चुभ उठा और उसे दुःख हुआ कि उसने व्यर्थ प्रोफेसर सुधांशु के सम्मुख

अपने को हल्का किया। वह लज्जित होकर मौन हो गई और अपने निश्चय-विहीन नेत्र आकाश पर फँला दिये।

सभा का कार्य-क्रम प्रारम्भ हुआ। प्रोफेसर सुधांशु बोले, “हमारा लक्ष्य ग्राम को एक स्वावलम्बी केन्द्र बनाना है। हमारा निश्चय है कि यदि ऐसे स्वावलम्बी केन्द्र भारत भर में बना दिये जायें तो देश स्वयं अपना आवश्यकताओं की पूर्ति करने में सफल होगा। राष्ट्र में जब तक विषमता पनपती रहेगी तब तक जन-जीवन अप्रगता की ओर ही अग्रसर होगा। भारत में बड़े और छोटे उद्योग साथ-साथ चल कर राष्ट्र के रिक्त कोष को भरने में सहायक हो सकते हैं और उन्हें होना चाहिए, परन्तु सहयोग की भावना न रखकर एक का दूसरे वर्ग के अधिकारों पर कुठाराघात करना न्याय-संगत नहीं। इसका परिणाम होगा सुसंगठित-क्रांति, जिसे फिर रोक नहीं जा सकेगा। इस संघर्ष में राष्ट्र की प्रगति रुक जायेगी।

हमें बुद्धिमत्ता से काम लेना चाहिए और संघर्ष के कामों को बढ़ावा नहीं देना चाहिए।”

सभी श्रोताओं ने आनन्द-निमग्न होकर करतल-ध्वनि की। फिर नियाज़ अहमद ने दो शब्द कहे और अन्त में जब ‘शून्य’ जी से रहा न गया तो वह भी मंच पर खड़े हो गये। वह भी एक ओजस्वी भाषण फटकारने के पश्चात् दृढ़ संकल्प के साथ बोले, “समय आगया है जब संसार को एक राष्ट्र बनाना होगा और संसार भर के कर्मचारियों को संगठित होकर एक स्वर से, एक मन और एक तन होकर, पूर्ण जीवाद के विरुद्ध विद्रोह करना होगा।”

प्रोफेसर सुधांशु ने प्रधान-पद से कविवर ‘शून्य’ जी को भाषण बन्द कर देने की आज्ञा दी और फिर सुमधुर शब्दों में बोले, “हम लोग सब इसी संसार के रहने वाले व्यक्ति हैं। परन्तु अभी-अभी जो आपने भाषण सुना वह उस व्यक्ति का भाषण था जिसका इस संसार से कुछ सम्बन्ध नहीं। वह कवि है, कलाकार है, भावनाओं तथा कल्पनाओं का

पुजारी है। उसके सामने जीवन का महत्व सौंदर्य और कला की उपासना है और जो कुछ उसने कहा है वह क्षणिक उफान है। इसलिए हमें अपने किसी भी कार्य में उफान लाने वाली परिस्थिति को पैदा नहीं करना है।”

मिस केतकी मुस्कराती हुई अन्त में बोलीं, “व्याख्यान आप लोग लम्बे-लम्बे और विचारपूर्ण सुन चुके हैं। मैं व्याख्यान देना नहीं जानती। मेरे जीवन की आज तक जो साधना रही है वह मानव की सेवा है। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए मैंने यहाँ अपना चिकित्सालय खोला है। मैं आशा करती हूँ कि आप सब सज्जन वृन्द इस शुभ-कार्य में सहयोग देंगे।”

इसके पश्चात् डेयरी का उद्घाटन हुआ। वह न किसी धनपति ने किया और न किसी मंत्री या अन्य प्रमुख व्यक्ति ने। डेयरी का उद्घाटन एक वृद्ध ग्वाले ने किया और हस्पताल का उद्घाटन एक बूढ़ी नर्स ने।

समारोह के शुभ अवसर पर रानी सुशीला ने सहानुभूति दिखलाते हुए चिकित्सालय के लिए दस हजार रुपया दान देना चाहा, परन्तु प्रोफेसर सुधांशु ने लेने से इन्कार कर दिया और मुस्कराते हुए कहा, “मन भारी न करना सुशीला! तुम्हारी सहानुभूति का मैं आभारी हूँ परन्तु दानस्वरूप धन प्राप्त करना मैं घृणास्पद समझता हूँ और ऋण लेने की अभी आवश्यकता अनुभव नहीं की। यदि कभी आवश्यकता हुई तो मेरी रानी सेठानी है यह मेरे मस्तिष्क में रहेगा।”

रानी ने लजा कर पलकें नीची कर लीं।

: १२ :

“तुम्हारी कार्य-कुशलता की मैं प्रशंसा नहीं कर सकता सरदार लुहारा सिंह जी ! ये चार दिन के सरकारी अफसर हमें मूर्ख समझते हैं ।” प्रकाश बाबू ने कहा ।

“अब तो आपका लोहा मान गये हैं अच्छे-अच्छे व्यापारी और उद्योगपति । ये सभी स्वीकार करने लगे हैं कि इतना शीघ्र इतनी उन्नति आज तक किसी उद्योगपति ने नहीं की । जिस बाज़ार से भी निकलो प्रकाश बाबू का प्रोडक्शन आँखों के सम्मुख दिखलाई देगा ।”

“यह सब तुम जैसे योग्य कर्मचारियों के ही परिश्रम का परिणाम है लुहारासिंह जी ! यह बैरिस्टर पुण्डरीकर भी बड़े योग्य व्यक्ति हैं । सेठ पोद्दार, सेठ बिनानी, सेठ जाकड़ वाला, सेठ गुलजारी लाल, सेठ भूखड़ नाथ इत्यादि का रुपया मिस्टर पुण्डरीकर का कानूनी मस्तिष्क इस प्रकार चाट गया कि मानो वह रुपया कभी यहाँ आया ही नहीं था । कानून ने उन बेचारों के ऐसे पर काट दिये हैं कि सामने पड़ने पर भी खिसर-खिसर ही कर पाते थे सब ।

“चमत्कार कर दिया । मिस्टर पुण्डरीकर ने कमाल का दिमाग पाया है । बड़े-बड़े दिमागदारों को मक्खी मच्छर समझते हैं वह ।”

ये बातें चल ही रही थीं कि सामने से खोपड़ी पर हाथ फेरते हुए बैरिस्टर पुण्डरीकर आगये और चिक उठा कर सीधे कमरे में प्रवेश किया । दो मिनट तो उसी मुद्रा में मस्तक पर सलवटों के बल उतारते और चढ़ाते रहे तथा उस्तरा फिरी चाँद पर हाथ फेरते खड़े रहे और फिर मौन हो, एक किनारे पर पड़ी कुर्सी पर विराजमान हो गये । बैरिस्टर पुण्डरीकर अंग्रेजी वेषभूषा में रहते थे, परन्तु सिर पर उस्तरा फिरवाते थे, क्योंकि उसे ताजा रखने के लिए उन्हें सुबह और संध्या को असली मक्खन की मालिश करानी होती थी । उनका कथन था कि पृथ्वी को उपजाऊ बनाने के लिए जिस प्रकार खाद और पानी की आवश्यकता

होती है उसी प्रकार खोपड़ी में नये-नये विचारों को जन्म देने के लिए उसे मक्खन और बादाम-रोगन-पिलाना नितान्त आवश्यक है। मिस्टर पुण्डरीकर का सिर सर्वदा खुला रहता था परन्तु कोट गर्मी में भी बन्द गले का ही पहनते थे। प्रकाश बाबू ने एक बार कहा भी था, “मिस्टर पुण्डरीकर ! यदि आपको बन्द गले का ही कोट प्रिय है तो कम-से-कम गर्मियों में गर्म कोट तो पहनना छोड़ दो।”

प्रकाश बाबू के इस वाक्य पर मिस्टर पुण्डरीकर को बहुत हँसी आई और वह किसी प्रकार अपने को सँभाल कर बोले, “प्रकाश बाबू ! तुम अभी बच्चे हो। तुम नहीं जानते कि मनुष्य की भावना, मनुष्य के विचार, मनुष्य की कल्पना—इन सभी के कीटाणु होते हैं। बस इसी-लिए मुझे गर्म कोट पहनना पड़ता है। तुम नहीं समझ सकते कि यदि मैं बारहों महीने बन्द गले का गर्म कोट न पहनता तो अपने मस्तिष्क की रक्षा करने में कभी भी सफल न होता और जो-जो मस्तिष्क के चमत्कार तुम्हारे सामने प्रस्तुत कर रहा हूँ इन्हे कितने ही वर्ष पूर्व हृदय के कीटाणु चाट गये होते। तुम नहीं जानते बाबू ! कि ये हृदय के कीटाणु किस प्रकार मस्तिष्क को घुन की तरह चाट कर खा जाते हैं।” कहकर मिस्टर पुण्डरीकर बहुत गम्भीर हो गये। प्रकाश बाबू केवल मुस्करा कर रह गये।

मिस्टर पुण्डरीकर की पेन्ट बारहों महीने ठंडी ही रहती थी, और वह भी बहुत चूस्त किस्म की, जिसे साधारण देखने वाला अलीगढ़ फैशन का पायजामा भी समझ सकता था। पहले यह लट्टे की रहती थी, परन्तु इधर कुछ दिन से प्रकाश बाबू के अनुरोध पर आपने यह जीन की सिलवाली थी। इस सब के अतिरिक्त मिस्टर पुण्डरीकर पैरों में जूता कभी नहीं पहनते थे और नंगे पैर रहने में ही वह अपने मस्तिष्क की सुरक्षा मानते थे। उनके विचार से मस्तिष्क एक अन्धकारपूर्ण शांत तहखाना है जिसमें बुद्धि निवास करती है। इस बुद्धि को स्वाँस लेने के लिए परमात्मा ने जो खिड़की का आयोजन किया है वह मनुष्य के

पैरों के तलवों में है। जूते पहनने से वह खिड़की बन्द हो जाती है। मिस्टर पुण्डरीकर के कुछ जीवन के सिद्धान्त थे, जिनमें टस-से-मस होना उन्होंने नहीं सीखा था। सर्दी हो या गर्मी, और चाहे बरसात हो, परंतु उनके बाने में कभी कोई अन्तर नहीं आता था। विलायत जाना हो अथवा घर से चार पग की दूरी पर, वह पूरा सूट पहने बिना कभी घर से बाहर नहीं निकलते थे।

बैरिस्टर पुण्डरीकर की एक और लच्छेदार बात यह थी कि वह भारत की बनी कोई चीज नहीं खाते थे। केवल मशीन द्वारा पैक किये हुए विलायती बिस्कुट ही उनका आहार था, और वह भी चाय के साथ जिसे वह स्वयं स्टोव पर बनाते थे। वह दूध नहीं, दूध-पाउडर का प्रयोग करते थे। उन्हें यह भय था कि बहुत से लोग उनकी प्रखर बुद्धि से चिढ़कर उन्हें विष पिलाना चाहते हैं। इसीलिए यदि कोई व्यक्ति उन्हें कुछ खिलाने की बात करता था तो वह उसे अपना शत्रु समझने लगते थे।

“कहिए बैरिस्टर साहब ! क्या कोई नवीन समाचार है ?” प्रकाश बाबू ने पूछा।

इस मस्तिष्क में जो कुछ है, वह सब नवीन ही है प्रकाश बाबू ! पुराना उसमें कुछ नहीं है।”

“आपने ऋण वाली समस्या का क्या सुझाव सोचा ? आठ करोड़ रुपया कहाँ से पेमेंट किया जायगा बैंक को ?”

“आप चिंता न करें प्रकाश बाबू ! मैंने उसका उपाय खोज लिया है। सरकार यदि डाल-डाल है तो हमें पात-पात समझिए। हमारी गहराईयों को सरकारी कर्मचारी नहीं पहुँच सकते। जब तक वे नियम बनाते हैं तब तक हम कार्य सम्पूर्ण कर लेने हैं।”

दूसरे दिन सुना गया कि प्रकाश बाबू ने अपना बैंक एक दूसरे बैंक में मिला दिया। किसी डाइरेक्टर को अपने बैंक से रुपया उधार लेना अनियमित था। प्रकाश बाबू ने अपने बैंक की स्थापना बैंक के लिए न

करके जनता का रुपया अपने काम में लगाने के लिए की थी। उन्होंने अपने बैंक से पन्द्रह करोड़ रुपया उधार लिया था। कई दिन से रुपये का प्रबन्ध न होने के कारण प्रकाश बाबू परेशान थे। आज उनके सम्मुख उनकी विजय खेल रही थी। कामशियल बैंक आफ इण्डिया के मैनेजिंग डाइरेक्टर को वह ऐसा चित्त लाये कि बेचारे का जीवन ही बरबाद हो गया। प्रकाश बाबू ने अपना बैंक कामशियल बैंक ऑफ इण्डिया में क्या मिलाया कि कामशियल बैंक ऑफ इण्डिया को ही हड़प कर लिया। इस बैंक में साठ प्रतिशत शेयर प्रकाश बाबू के हो गये।

“कहिए प्रकाश बाबू ! कैसा रहा ? सरकारी रुपया भी पेमेंट हो गया और एक चलता हुआ बैंक भी हाथ लग गया। बिला हल्दी फिट-करी के रङ्ग में निखार आगया।”

“इसमें संदेह नहीं बैरिस्टर साहब ! जिसके कानूनी परामर्शदाता आप जैसे योग्य चतुर तथा अनुभवी व्यक्ति हों वह जीवन में मार नहीं खा सकता ?”

“खा सकता है।” शून्य जी अपने बालों को सँवारते हुए बोले। ‘शून्य’ जी यहाँ कब और किस से ओर आकार विराजमान हो गये, इस का ज्ञान इन तीनों व्यक्तियों को उस समय हुआ जब ‘शून्य’ जी ने ये शब्द उच्चारण किये।

“नहीं खा सकता।” कड़क कर मिस्टर पुण्डरीकर बोले। “हमारी कुशलता और कानून की सीमा को उलंघन कर जाना बच्चों का खेल नहीं है ‘शून्य’ जी ! इसे आप कविता न समझें। इसका सम्बन्ध कौटिल्य की गम्भीर चालों से है। यह गोस्वामी तुलसीदास की रामायण नहीं है और न ही विद्यापति की पदावली है। यह दूसरे के मुँह में अपने मुँह का निवाला डालकर उसे साबुत ही निगल जाना है महाशय !”

“साबुत तो निगल जाना ! परन्तु वह सब तो प्रेम में होता है, और हमारी कल्पना के लिए तो यह क्रीड़ा मात्र है बैरिस्टर साहब ! जिसे आप गम्भीर विचार-शक्ति मान कर मन-ही-मन अपनी योग्यता के पुल-

बाँध रहे हैं वह हमारे नव सिखिये शिष्य नित्य अपनी कविताओं में करते हैं।”

सरदार लुहारासिंह अपनी दाढ़ी सँवारते हुए बोले, “आप दोनों ही सत्य कह रहे हैं, परन्तु ‘शून्य’ जी ! यह संसार कल्पना के पैरों पर नहीं चलता । इसे चलाने के लिए बैरिस्टर पुण्डरीकर जैसे योग्य व्यक्तियों की आवश्यकता है ।”

इस पर ‘शून्य’ जी गम्भीर घन-गर्जन के समान हँसकर बोले, “आपने संसार को चलाने का ठेका लिया है क्या ? आपने कहा कि बैरिस्टर पुण्डरीकर के रहते प्रकाश बाबू धोखा नहीं खा सकते और मैं कहता हूँ कि वह धोखा खा रहे हैं । परन्तु इससे दुनियाँ के चलने, न चलने का क्या सम्बन्ध ? दुनियाँ चलती रहेगी तो हम भी चलते रहेंगे और दुनियाँ बैठ जायगी तो हम लेट जायेंगे ।”

रानी सुशीला, जो बरावर के कमरे में बैठी यह सब सुन रही थी, चिक उठा कर अन्दर प्रवेश करती हुई बोली, “बैरिस्टर साहब ! प्रकाश बाबू सच-मुच धोखा खा रहे हैं । इन्होंने आज तक जीवन में धोखा ही खाया है । इसके अतिरिक्त यह और कुछ खा ही नहीं सकते ।”

“खा रहे हैं ।” आश्चर्य प्रकट करते हुए बैरिस्टर पुण्डरीकर तथा सरदार लुहारासिंह बोले, “यह हम लोग मानने को तय्यार नहीं हैं । आपके कथन ने हमारी मान-हानि की है ।”

“आप लोगों का न मानना स्वाभाविक ही है । यदि आप अपनी भूलें मानने लगे तो आपके जीवन का विकास होने लगे । आपकी दृष्टि वस्तु के ऊपरी भाग का निरीक्षण करती है । यदि आप अपनी दृष्टि हृदय-तल में उतारें तो आपको सही ज्ञान हो ।” ‘शून्य’ जी ने कहा ।

“शून्य जी ठीक कह रहे हैं । प्रकाश बाबू का मिस केतकी के साथ झुल-मिल कर उठना-बैठना, खाना-पीना, घूमने जाना, यह सब क्या है ? क्या इसे आप मार खाना नहीं कहेंगे ? क्या यह इनके जीवन की पराजय नहीं है ?”

“रानी सुशीला मेरा अभिप्राय पैसे की मार से था, नयनों की मार से नहीं। मैं लज्जित हूँ कि आप के विचारों की गहराई तक मैं नहीं पहुँच सका। भविष्य में ऐसी भूल नहीं होगी। प्रेम-शास्त्र का अध्ययन न होते हुए भी प्रकाश बाबू की नौकरी करने के लिए मुझे उसका अध्ययन करना होगा।” बैरिस्टर पुण्डरीकर बोले।

“नहीं पहुँच सके, पुण्डरीकर जी ! आप पहुँच ही नहीं सकते। आपने अपने हृदय के उद्गारों को कभी विशुद्ध वायु-मंडल में स्वाँस लेने का अवसर ही नहीं दिया। आपके इस बन्द गले के गर्मकोट के नीचे दब कर हृदय के ऊपर वाली खाल के छिद्र बन्द हो गये हैं। मुझे देखिये मैं बारहों महीने बारीक रेशम की शेरवानी पहनता हूँ और उसके भी बटन कभी नहीं लगाता। मलमल का कुर्ता है तो उसके कालर की पट्टी जालीदार है। आप हृदय का मूल्य नहीं जान सकते ? बारह महीने नंगे पैर घूमते-घूमते आपका.....”।

“यह सब कुछ नहीं.....”।

रानी सुशीला कुछ कहना चाहती थी कि प्रकाश बाबू ने गम्भीर स्वर में कहाँ, “रानी ! तुम यहाँ से जाओ और शून्यजी ! इस समय आप भी जा सकते हैं। सरदार जी ! आप को सेक्रेटरीयट जाना है। वह कार्य आज ही होजाना चाहिए। दक्षता इस बात में है कि मंत्री महोदय हाथ मलते रह जायें और कार्य नीचे-ही-नीचे हो जाये। रुपये की कोई चिंता नहीं।”

रानी सुशीला और ‘शून्य’ जी उठकर चले गये। सरदार लुहारारसिंह भी विदा हुए।

“मैं पचास हजार का ऑफर दे चुका हूँ, इसे चाहे वह सब आपस में बाँट लें या जैसा चाहे करें, अपना काम होना चाहिए। कूड़े का रुपया खड़ा करना है प्रकाश बाबू ! इसीलिए घबरा रहे हैं बेचारे। ऊपर का चेकिंग भी अब पहले की अपेक्षा कड़ा हो गया है। कुछ नये-नये छोकरे देश-भक्ति और राष्ट्रीयता का दम भर कर सरकारी महकमों में ऐसे घुस

आये है कि हरामजादे नाक में दम किये है। उनके सामने पैसे का नाम लेना अपने हाथों में हथकड़ियाँ डलवाना है। गत महायुद्ध के अवसर पर माल सप्लाई करते समय मुझे दो दिन के लिए हवालात में रहना पड़ा था, परन्तु उन दिनों की बात ही कुछ और थी। अपनी करनी में तो मैं बाज आने वाला नहीं प्रकाश बाबू ! आगे भगवान् मालिक है।” पुण्डरीकर बोले।

सबके चले जाने पर प्रकाश बाबू ने मिस्टर पुण्डरीकर से कहा, “फँस गया बेचारा सेठ।”

मरने भी दो बाबू ये तो चालें है शतरंज की। जो जितना अच्छा खेलना जानेगा वही शै देगा। अब देखिए न ! आपकी और मिस केतकी की चालें ही तो चली जा रही हैं। आप उनके रूप पर लट्टू हैं तो वह आपकी योग्यता पर प्राण देती है, परन्तु बीच में प्रोफेसर सुधांशु आकर अपना मोहरा टिका देते हैं।”

“आप सब कुछ बतलाते है बैरिस्टर साहब ! परन्तु इस समस्या का सुझाव नहीं देते।”

“क्या सुझाव दूँ ? अर्थ से सम्बन्ध रखने वाली समस्या हो तो चुटकियों में हल निकल सकता है। यह है हृदय की बीमारी, नेत्रों की समस्या।”

ये बातें चल ही रही थीं कि सामने से मिस केतकी आगईं। वह पर्दा हटाकर ज्यों ही अन्दर आईं तो प्रकाश बाबू ने खड़े होकर उनका स्वागत किया। बैरिस्टर पुण्डरीकर उसी प्रकार गम्भीर मुख-मुद्रा बनाये अपने स्थान पर बैठे-बैठे बोले, “बहुत बड़ी आयु है मिस केतकी !”

“यह आपने कैसे जाना ?

उस दिन आपने कहा था कि आप मस्तिष्क से संबन्ध रखने वाली बातों के अतिरिक्त और कुछ नहीं जानते।”

“मस्तिष्क ही ज्ञान का उद्गम-स्थान है मिस केतकी ! जब हम यह

कहते हैं कि हम कुछ नहीं जानते, तो समझना चाहिए कि हम सब कुछ जानते हैं।”

यह बात बैरिस्टर पुण्डरीकर ने बहुत ही गम्भीरता पूर्वक कही परन्तु मिस केतकी ने इसे उपहास मान कर मनोविनोद की सामग्री समझा और मुस्कराते हुए प्रकाश बाबू के पास जाकर बैठ गई।

मिस्टर पुण्डरीकर ने जब यह देखा कि यहाँ अब प्रेम-नाटक खिलेगा और हो सकता है कि यह कमरा प्रेम के कीटाणुओं की क्रीड़ा-स्थली बन जाये, तो अपने मस्तिष्क की सुरक्षा के लिए वह वहाँ से प्रस्थान करने को उठ खड़े हुए।

“आपके बैरिस्टर साहब कितने योग्य व्यक्ति हैं, इसका अनुमान मैं नहीं लगा सकती, परन्तु कितने सनकी हैं इसका ज्ञान मुझे होता जा रहा है।” मिस केतकी।

“यों तो कुछ-न-कुछ सनक प्रत्येक बड़े आदमी में होती है मिस केतकी ! परन्तु जितने भी विशेष-योग्यता के व्यक्ति तुम्हें संसार में मिलेंगे उनमें कुछ-न-कुछ सनक तुम्हें अवश्य देखने को मिलेगी।”

इतना कहकर प्रकाश बाबू ने एक सनकियों की गाथा का प्रकरण छेड़ दिया। आपने भारत के सनकियों और अमेरिका के सनकियों का एक तुलनात्मक दृष्टिकोण मिस केतकी के सम्मुख प्रस्तुत किया और गर्व के साथ मिस केतकी के मुख पर देखते हुए अपने हृदय में अनुभव किया कि इस सूक्ष्म-विवेचन का मिस केतकी पर गहरा प्रभाव पड़ा।

“तब तो आप में भी किसी-न-किसी सनक का होना आवश्यक है।”

“परन्तु तुम मुझे बड़ा आदमी कब से समझने लगीं मिस केतकी !”

“जब से आपने बड़े-बड़े काम किये। पहले जब आप व्यर्थ की बातों पर रुठ जाया करते थे तो मैं आपमें आकर्षण देखते हुए भी बचपन अधिक पाती थी।” यह कहते हुए मिस केतकी के मुख पर मुग्ध सौंदर्य

खेल रहा था। उसकी घुंघराली लटें पंखे की हवा में उड़ाने भर रही थीं।

प्रकाश बाबू की दृष्टि मिस केतकी के मुख पर पड़ी तो देखा माथे की बिन्दी आज विशेष आकर्षण से दमक रही थी। प्रकाश बाबू ने देखा कि केतकी का यौवन इठलाता हुआ अपना सौंदर्य उसके नेत्रों में भर रहा था और उसकी दृष्टि की प्रत्येक कोर जीवनामृत की वर्षा करती हुई हृदय में घर कर जाती थी। प्रकाश बाबू के नेत्र जड़ हो गये केतकी के मुख पर।

“क्या कुछ विशेष बात दिखलाई दे रही है आज आपको मेरे मुख पर?” मिस केतकी ने पूछा।

“हँसी न समझो तो कह डालूँ कि आज विधाता का समस्त सौंदर्य संचित होकर तुम्हारे मुख-मण्डल पर उतर आया है मिस केतकी!”

केतकी कुछ लजाई सी सिटपिटा कर अपने को सँभालती हुई प्रकाश बाबू के मुख पर एक-टक देख कर बोली, “समझ नहीं पा रही हूँ प्रकाश बाबू! आपके कथन में कहाँ तक सत्य है, परन्तु कभी-कभी व्यक्ति को अपने नेत्रों की रङ्गीनी से भी संसार रङ्गीन दिखलाई देने लगता है।”

“यह बात नहीं है केतकी! मैं तुमको अपने हृदय की रानी बनाना चाहता हूँ और तुम मुझसे घृणा करती हो।”

“भावुकता में बहकर हल्के होने की आवश्यकता नहीं है प्रकाश बाबू! यदि मैं आपसे घृणा करती तो आपसे मिलने क्यों आती? परन्तु घृणा, प्रेम और आकर्षण का अर्थ विवाह नहीं होता।” कहते-कहते मिस केतकी की मुख-मुद्रा गम्भीर हो उठी।

प्रकाश बाबू मिस केतकी की बात का कोई उत्तर न दे सके।

: १३ :

मिस केतकी और प्रोफसर सुधांशु 'बनस्थली डेयरी फार्म' के अन्दर खड़े आपस में बातें कर रहे थे ।

मिस केतकी बोलीं, डेयरी की सफलता पर मैं आपको बधाई देती हूँ ! नियाज भट्टा के अनथक परिश्रम ने बनस्थली को स्वर्ग बना दिया है ।”

“हम लोगों के परिश्रम के साथ तुमने भी बनस्थली-निवासियों के जीवन में स्वास्थ्य का संचार किया है । तुम सबके सहयोग पर मैं अपने संकल्पों का मकान बनाने का स्वप्न देख रहा हूँ । हमारी सब योजनाएँ और हमारा सारा परिश्रम बनस्थली-निवासियों का सहयोग प्राप्त करके आगे बढ़ा है । यहाँ के निवासियों ने भूखे और प्यासे रहकर हमारी योजनाओं के भार को अपने कंधों पर सम्भाला है । पेटों से पट्टियाँ बाँध कर परिश्रम किया है और आज उसी का यह परिणाम है कि यह बस्ती उन्नति के उच्चतम शिखर पर पहुँचती जा रही है ।”

“यह सत्य है परन्तु बनस्थली आपके यहाँ आने से पूर्व मस्तिष्क-विहीन शरीर था । आपने यहाँ के जीवन में बुद्धि का संचार किया । यहाँ के बच्चे-बच्चे को आपका कृतज्ञ होना चाहिए ।”

“ऐसा मत कहो मिस केतकी ! मैंने जो कुछ किया है, वह अपना कर्तव्य समझ कर किया है, किसी को कृतज्ञ बनाने के अभिप्राय से नहीं । मैंने संगठन की योजनाएँ प्रस्तुत की हैं और उन योजनाओं के संचालन से यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया है कि संगठन ही हमारी पूँजी है जिसके आधार पर हम बड़ी-से-बड़ी योजनाओं को संचालित कर सकते हैं ।”

“इसका मतलब यह है कि आपके विचार से पूँजी का कोई महत्व ही नहीं ?”

“यह तो मैंने नहीं कहा केतकी ! पूँजी मजदूरों की चोरी है ।

मस्तिष्क और शारीरिक परिश्रम द्वारा ही पूँजी एकत्रित होती है । आज वही पूँजी अपने जन्म-दाताओं का सौदा कर रही है । यह मैं सहन नहीं कर सकता । प्रकृति के समान ही पूँजी भी राष्ट्र की सम्पत्ति होनी चाहिए और उसका उपयोग राष्ट्र के उत्थान के लिए हो । पूँजी को व्यक्तिगत लाभ के लिए एकत्रित करके समाज को उसके उपयोग से वंचित रखना पाप है । राष्ट्र की उत्तरदायी सरकार को चाहिए कि वह इस प्रकार के पापियों को दण्ड दे ।”

यह बात प्रोफेसर साहब ने सरल स्वाभाविक ढङ्ग से सिद्धान्त रूप में कही थी परन्तु उनके इन शब्दों में केतकी ने एक जलन का अनुभव किया और सहसा उसके मुँह का रङ्ग बदलने लगा । प्रोफेसर साहब किसी भी व्यक्ति के मुँह को देख कर उसके हृदय के भावों को पढ़ना जानते थे । वह मुस्करा कर बोले, “यह जो कुछ भी मैंने कहा है केतकी ! सिद्धान्त रूप में कहा है । तुम्हारे हृदय को ठेस पहुँची, इसका मुझे दुःख है । परन्तु तुमने आज आते ही यह प्रकरण क्यों छेड़ा ? आओ मैं तुम्हें अब डेयरी दिखलाता हूँ । इसकी व्यवस्था का भार बनस्थली के नारी-समुदाय ने अपने कंधों पर सँभाला है ।”

“नारी-समुदाय ने ?”

“हाँ हाँ, नारी-समुदाय ने । बहन सुभद्रा ने यह भार अपने सिर पर लिया है । सुभद्रा का कहना है कि पालन-पोषण चाहे, व्यक्तियों का हो अथवा जानवरों का, स्त्री ही अधिक कुशलता पूर्वक कर सकती हैं ।”

“यह सच है । पालन-पोषण करना नारी का जन्म-सिद्ध अधिकार है । आपके इसी सिद्धान्त के मूलाधार को समझते हुए मैंने डाक्टरी की परीक्षा पास की थी । किसी के हृदय की गुप्त भावनाओं तक पहुँच जाना, जितना नारी के लिए सुलभ है उतना पुरुष के लिए नहीं ।”

“और विशेष रूप से एक सुन्दर कोमलाङ्गी के लिए मिस केतकी ?”

“क्या आपका यह संकेत मेरी ओर है ?” मुस्कराते हुए खड़ी होकर केतकी ने पूछा ।

प्रोफेसर सुधांशु भी खड़े हो गये, परन्तु वह यह न समझ सके कि उन्होंने मिस केतकी की ओर क्या संकेत किया । वह सरल स्वभाव से बोले, “मैं जो कुछ कह रहा हूँ, सिद्धान्त रूप से कह रहा हूँ मिस केतकी ! संकेत, तुम जानती हो, मैं कभी किसी की ओर नहीं करता ।”

डेयरी की चहारदीवारी पक्की थी । अन्दर का शेष सब भाग कच्चा था । गाय भैंसों के लवारों के लिए छोटी-छोटी कम ऊँची खोरें बनी थीं और उनके पास छोटी-छोटी खूँटियाँ गड़ी थी । भैंसों के लिए एक ओर लम्बी-लम्बी खोरें थीं और गायों के लिए दूसरी ओर । खोरों के ऊपर लम्बे-लम्बे छप्पर डले हुए थे और खोरों के चारों ओर पृथ्वी पर बालू रेत बिछा था । इस समय गायें और भैंसें ढोरी में खुल चुकी थीं और बहन सुभद्रा ने उनके बैठने के स्थानों पर से गीली मिट्टी उठवा कर वहाँ पर सूखा और साफ़ बालू रेत बिछवा दिया था । खोरों पर बँधे हुए लवारों के गलों में कठने और टालें बँधी थीं और साथ ही मोर-पेंच की बनी हुई सुन्दर पठियाँ भी । सफेद रङ्ग के गायों के लवारे मेंहदी से रंग कर सुभद्रा बहन ने और भी सुन्दर बना दिये थे ।

डेयरी की यह रूपरेखा देखकर केतकी का हृदय गद्-गद् हो उठा और उसने सुभद्रा की योग्यता की मन-ही-मन सराहना की । सुभद्रा पहली स्त्री थी जो इस ग्राम में आने पर मिस केतकी के सम्पर्क में आई और जिसके स्वाभाविक आकर्षण ने केतकी को उसका उपचार करने के लिए बाध्य किया ।

सुभद्रा बाल-विधवा थी । वह इसी ग्राम में पैदा हुई, पली और रही थी । माता पिता ने भी अधिक दिन साथ नहीं दिया और भाई कोई था नहीं । उसके आचरण का बल अन्य किसी पुरुष की सहायता प्राप्त करने के मार्ग में बाधक रहा । कुछ पास-पड़ोसियों ने कई बार सुभद्रा से किसी के घर में बैठ रहने का संकेत ही नहीं बल तक दिया, परन्तु सुभद्रा

ने उसे अस्वीकार कर दिया। वह जंगल से जाकर घास खोद लाती थी और उसे सड़क पर ही बैठकर किसी आने-जाने वाले ताँगे के कोचवान के हाथ बेच कर अपना जीवन-निर्वाह करती थी। इसी प्रकार जीवन किसी तरह चल रहा था कि अकस्मात् वह एक दिन ज्वर से पीड़ित हो गई और ज्वर ने यहाँ तक दबाया कि खटिया पर पड़े-पड़े महीनों व्यतीत होगये। एक दिन इसी दशा में किसी प्रकार वह घिसट कर अपने पड़ोस के एक बच्चे के साथ मिस केतकी के औषधालय में आई। मिस केतकी ने उसे अपने औषधालय में ही एक चारपाई दे दी।

वही सुभद्रा आज डेयरी की संचालिका थी। पीछे से इठलाती हुई, अपना घाघरा घुमाकर स्वाभाविक मटक के साथ नेत्रों को तरेर कर बोली, “डाक्टरनी जी ! देखिये आपका सिखाया हुआ स्वच्छता का सबक मैंने कैसा याद किया है।”

केतकी ने मुस्करा कर सुभद्रा के दोनों कंधे पकड़ लिए और नेत्रों में नेत्र डाल कर बोली, “सुभद्रा ! तुम धन्य हो। यदि तुम्हारी ही तरह पाठ पढ़कर जीवन में घटाने की क्षमता भारत के नारी-समाज में आजाये तो भारत स्वर्ग बनजाय। मैं आज प्रत्यक्ष रूप से देख रही हूँ कि कच्चे मकानों में स्वच्छता और सौंदर्य का वह उदाहरण प्रस्तुत किया जा सकता है जो पक्के मकानों में भी दुर्लभ है।”

“सुभद्रा ! तुम्हें मैं ग्राम की माता के रूप में देखता हूँ। बनस्थली-निवासियों के दूध और घी की व्यवस्था करने में तुमने जो सहयोग दिया है उसके लिए बस्ती का प्रत्येक व्यक्ति तुम्हारा कृतज्ञ रहेगा।” प्रोफेसर सुधांशु बोले।

“देखिये प्रोफेसर साहब ! और सब बातें मैं आपकी मानने को उद्यत हूँ, परन्तु मैं बस्ती की माता नहीं बन सकती। इस भार को सँभालने की क्षमता तो केवल केतकी बहन में ही है।” सुभद्रा ने मुस्करा कर कहते हुए प्रोफेसर साहब की ओर देखा।

प्रोफेसर साहब ने अपनी धुन में सुना ही नहीं कि सुभद्रा क्या कह रही थी और वह आगे बढ़कर गाय के बछड़ों की खिलवाड़ देखने लगे।

“इनमें एक-एक छीना एक-एक लाख का है।”

“ये बनस्थली के लाल हैं सुभद्रा ! तुम्हारी सुरक्षा में पलकर ये जहाँ भी जायेंगे बनस्थली का यश फैलायेंगे। भारत के भोजन का उत्पादन करने वाली यह प्रधान शक्ति है जिसका संगठन करने का यश सुभद्रा बहन को प्राप्त होगा। मैं विश्वास करती हूँ कि भारत के कोने-कोने में होने वाली बँलों की प्रतियोगताओं में तुम्हारे हाथ के पाले हुए बछड़े सर्वदा प्रथम पुरस्कार प्राप्त करेंगे।”

“यह तो तुमने आशीर्वाद दिया है अपनी बहन को केतकी और तुम्हारा आशीर्वाद एक दिन अवश्य फलीफूत होगा। बनस्थली का प्रत्येक व्यक्ति जिस प्रकार कर्तव्यपरायण होकर आज मानव-जीवन का निस्वार्थ उदाहरण भारतीय राष्ट्र के सम्मुख उपस्थित करने जा रहा है उसी प्रकार यहाँ का पैदा होने वाला प्रत्येक जानवर भी भारत में उदाहरण स्वरूप स्वीकार किया जायगा।”

इसी समय सामने से एक नया मोटर-ट्रक आता दिखलाई दिया और ज्यों ही वह उनके सामने आकर रुका तो मिस केतकी ने देखा कि उसमें ड्राइवर के स्थान पर नियाज भय्या बैठे थे। नियाज अहमद ने मोटर से नीचे उतर कर नमस्कार किया और मुस्कराते हुए बोले, “प्रोफेसर साहब ! ट्रक तय्यार है।”

“मेरी डेयरी के लिए ?”

“हाँ तुम्हारी डेयरी के लिए सुभद्रा !”

सुभद्रा आनन्द से परिपूर्ण होकर भूम उठी। उसका मन तरङ्गित होगया और नेत्रों के सम्मुख डेयरी के उज्ज्वल भविष्य के रङ्गीन चित्र चल-चित्र की भाँति बदलने लगे। सुभद्रा के नेत्र पल भर के लिए मुँद गये और उसने देखा कि कई लम्बी पंक्तियों में ग्राम की रङ्गीन-से-रंगीन

नारियाँ ग्राम्य-गीत गा-गाकर दूध निकाल रही थीं और सभी ने अपनी-अपनी दूध की दुहावनियाँ अपने छुटनों पर सँभाली हुई थीं। एक क्षण में सब की दुहावनियाँ दूध से भर गईं और उनमें ऊपर तक झाग उभर आये। वे दुहावनियाँ फिर बड़े-बड़े पीपों में उडेल दी गईं। और तभी सुभद्रा के नेत्र खुल गये।

ट्रक सामने खड़ा था और वह मुस्करा रही थी।

“इस डेयरी के सुचारु रूप से संचालित होने पर हमारी बस्ती के रहने वालों को दूध, दही और मक्खन की कमी नहीं रहेगी। इसके अतिरिक्त आर्थिक आय भी होगी।”

नियाज अहमद मूँछों पर ताव देकर बोले, “हमारी मर्जी का तो यह काम हुआ है बहन केतकी ! अब कम-से-कम कोटोजम से तो जान छूटेगी। सच जानलो केतकी ! खून का पानी बना दिया कोटोजम ने। मिठाई खाओ तो कोटोजम, पूड़ियाँ खाओ तो कोटोजम, पराँठे खाओ तो कोटोजम यह कोटोजम यम बनकर चिपट गया है भारतवासियों को।”

“मुझे भी यह योजना बहुत पसन्द आई। इससे वनस्थली के रहने वालों का स्वास्थ्य ठीक हो जायगा। स्वास्थ्य जीवन की प्रथम आवश्यकता है।”

“आपने बिलकल ठीक कहा केतकी बहन !” सीना तान कर गर्व के साथ नियाज अहमद बोले।

मिस केतकी अपने औषधालय की ओर चली गईं और प्रोफेसर सुधांशु चौपाल पर। नियाज अहमद सुभद्रा से बातें करता हुए डेयरी के अन्दर चले गये।

“भाई वाह ! तुमने तो सुभद्रा देवी जी ! इस डेयरी की कच्ची छप्परों से ढकी हुई चहारदीवारी को चमन बना दिया। कमाल की सफ़ाई कराई है तुमने ?” नियाज अहमद बोले।

“कराई नहीं की है सरकार ! यह सब रेटा तो पलियों में भर-भर कर मैंने स्वयं अपने हाथ से डाला है ।”

“और वह गीली मिट्टी कौन फेंक कर आया था ?”

“आज यह भी मुझे ही करना पड़ा । जानते हो क्यों ?”

“क्यों ?” सुभद्रा के मुख पर नेत्र गड़ा कर नियाज़ अहमद ने पूछा ।

“आज हमारे भङ्गी की बहू बीमार होगई । मैं उसे बुलाने गई तो उल्टा दवा पहुँचाने का काम और करना पड़ा ।”

“तुम कितनी अच्छी हो सुभद्रा ! काश कोई इसे जान पाता ।” नेत्रों में नेत्र डालकर नियाज़ अहमद ने खोर पर बैठते हुए एक छोटी सी बछिया के मुख को प्यार से हाथों में लेकर कहा ।

“क्या आप भी इसे नहीं जानते ?” कहकर प्रश्नवाचक दृष्टि से सुभद्रा ने देखा ।

“जानता हूँ ।”

“फिर ?”

इसी समय डेयरी की गायें और भैंसें जंगल से आगईं । उनके गले में बँधी टल्लियों की मीठी ध्वनि में नियाज़ और सुभद्रा की हृदयत्रियों से भङ्कृत होकर मुक्त हो उठने वाले सुमधुर स्वर विलीन होगये । दोनों व्यक्ति गायों तथा भैंसों को उनके खूँटों पर बाँधने में व्यस्त हो गये ।

: १४ :

वैरिस्टर पुण्डरीकर और सरदार लुहारासिंह बार-रूम में बैठे, बैरे को एक बोतल व्हिस्की और एक बोतल बीयर की लाने का आर्डर देकर बिजली के पंखे के नीचे सुधर कर बैठ गये । सरदार लुहारासिंह ने अपने कोट की आस्तीन से ही अपने गले का चूता हुआ पसीना पोंछ लिया और वैरिस्टर साहब ने पसीने की ओर ध्यान ही नहीं दिया । बैरे ने बोतलें मेज़ पर टिकाते हुए केबिन का पर्दा खींच दिया और फिर थोड़ी ही देर

में बर्फ के दो जार लाकर बोतलों के बीच में रखते हुए कहा, “सरकार कुछ खाने के लिए आर्डर कीजिए।”

“मटन चाप।” सरदार लुहारासिंह ने कहा।

“बिस्किट।” बैरिस्टर पुण्डरीकर बोले और बैरा सब कुछ समझ कर चला गया। बैरा जानता था कि ये दोनों व्यक्ति किस-किस चीज के श्रेकीन थे?

सरदार लुहारासिंह ने जार में ब्रिस्की और बीयर को मिला कर काकटेल तय्यार करली और फिर दोनों ने लबालब भरे गिलास हाथों में लेते हुए एक दूसरे से टकराये। ये दोनों मित्र बन चुके थे, जीवन का प्रत्येक रहस्य एक दूसरे पर प्रकट कर देने के लिए। नित्य बार-रूम में एक दूसरे के स्वास्थ्य की शपथ खाई जाती थी और फिर दोनों कार्य-क्षेत्र में अवतीर्ण होते थे।

“प्रकाश बाबू का सितारा आज कल बुलन्दी पर है बैरिस्टर साहब!”

“बुलन्दी ही कहोगे सरदार जी! प्रकाश बाबू को इस मेरी खोपड़ी ने पारस बना दिया है।” कहकर अभिमान के साथ उन्होंने अपनी घुटी चाँद पर हाथ फेरा।

“इसमें क्या शक है? आपके दिमाग ने मिट्टी को सोना बना दिया है। प्रकाश बाबू आपका लोहा मानते हैं।”

“ऐसा न कहो सरदार जी! ऐसा न कहो! मेरे मस्तिष्क की प्रगति तुम्हारी कार्य-कुशलता पर आधारित है। मैं इन सब योजनाओं की सफलता में तुम्हारा महत्व प्रकाश बाबू से कहीं अधिक समझता हूँ। उत्पादन व्यर्थ है, यदि माल की निकासी न हो, और माल की निकासी में जो दक्षता तुम्हें प्राप्त है वह अन्य व्यक्ति को नहीं।”

सरदार लुहारासिंह अपनी प्रशंसा सुनते-सुनते पूरा गिलास चढ़ा गये। नेत्रों में खुमारी लेकर मूर्छों को पोछते हुए दीनतापूर्वक बोले, “बच्चा हूँ आपका, बैरिस्टर साहब! आपका हाथ सिर पर रहे तो हवा में सौदे कर सकता हूँ।”

बैरिस्टर पुण्डरीकर, “क्यों नहीं, क्यों नहीं, तुम सब कुछ कर सकते हो।”

इनकी बात इसी प्रकार मान सम्मान के साथ प्रारम्भ होती थीं और अन्त में कमीशन के बँटवारे पर जाकर समाप्त हो जाती थीं। कभी-कभी यह बँटवारा गर्मगर्म भी हो उठता था, परन्तु साधारणतया शांति के साथ ही समाप्त हो जाता था। सरदार जी यार-मारी करना नहीं जानते थे, परन्तु फिर भी अपनी विशेष-योग्यता की कटौती वह मेज़ पर उपस्थित की जाने वाली रकम में से पहले ही सुरक्षित रख लेते थे। नेत्रों में मदिरा का स्रूर छाजाने के पश्चात् जब सरदार लुहारामसिंह अपनी दिन भर की आय की जेबें खाली करके बैरिस्टर पुण्डरीकर के सम्मुख डाल देते थे तो बैरिस्टर पुण्डरीकर भी उस पूँजी को आधो-आध करके एक हरा पत्ता सरदार लुहारामसिंह जी को शिष्य घोषित करते हुए अपने हिस्सों में से दे देते थे और सरदार जी प्रसन्नता पूर्वक अपने को शिष्य मानकर इसे लेते हुए इसी में से गुरु-दक्षिणा स्वरूप बार का बिल चुका देते थे।

इस बार की स्थापना स्वयं प्रकाश बाबू ने की थी और उनका यह मत था कि यदि दिन भर परिश्रम करने के पश्चात् कोई व्यक्ति अपना संध्या-समय बार में व्यतीत करे, तो कोई हानि नहीं। यहाँ दिन भर की थकान काफ़ूर होजाती है और व्यक्ति दूसरे दिन फिर नई ताज़गी के साथ कार्य पर जुट जाने के लिए तय्यार हो जाता है। कभी-कभी प्रकाश बाबू स्वयं भी बार में आते थे और उनका बैठने का स्थान कुछ ऐसे ढंग का बना था कि वहाँ से वह पूरे बार को देख सकते थे। प्रकाश बाबू बैरिस्टर पुण्डरीकर और सरदार लुहारामसिंह का यह रुपये का बटवारा होता हुआ कई बार देख चुके थे, परन्तु कभी उन्होंने इस ओर संकेत मात्र भी नहीं किया था। आज अचानक मिस कामिनी को साथ में लिए वह बैरिस्टर पुण्डरीकर और सरदार लुहारामसिंह के पास आखड़े हुए और उन्हें इस प्रकार रुपयों में खेलते देख कर बोले, “बैरिस्टर पुण्डरीकर !

और सरदार लुहारासिंह जी ! आज मेरी कल्पना साकार हो उठी । तुम लोगों को इस प्रकार धन के संसार में क्रीड़ा-निमग्न देखकर मेरा हृदय गद्ग-गद्ग हो उठा । तुमने मेरी योजनाओं में जो कार्य किया है उसके बल पर जो कार्य मैं प्रस्तुत कर सका हूँ वह तुम्हारी ख्याति को अमरत्व प्रदान करेगा ।”

इतना कहकर प्रकाश बाबू मिस कामिनी को साथ लेकर बैरिस्टर पुण्डरीकर और सरदार लुहारासिंह के सामने वाली कुर्सी पर बैठ गये । कुछ देर दोनों व्यक्ति सन्न से रहे परन्तु जब फिर प्रकाश बाबू ने बोलना प्रारम्भ कर दिया तो उनमें भी स्फूर्ति का संचार हुआ ।

“यही हैं वे दो व्यक्ति हैं जिनके बल पर मेरे स्वप्नों का दुर्ग बना रहा है । यहाँ पर उत्पादन का जो केन्द्र मैं स्थापित करने जा रहा हूँ वह भारत में अपने ढंग का अकेला ही होगा । चारों ओर बड़े-बड़े मिल होंगे और उनके बीच में मेरा विशाल महल बनेगा, जिसमें तुम रानी बनकर विराजमान होगी ।

बैरिस्टर पुण्डरीकर और सरदार लुहारासिंह के सामने ही प्रकाश बाबू ने मिस कामिनी के नेत्रों में नेत्र डाल दिये और मिस कामिनी चित्र लिखित-पुतलिका के समान अपने बड़े-बड़े नेत्रों में प्रकाश बाबू के जीवन को पी गई ।

यौवन फूटा पड़ रहा था । सुशीला और मिस केतकी कामिनी के मानो सौंदर्य की छाया मात्र थीं । मिस कामिनी के सौंदर्य को देखकर सम्मुख कविवर निराला का यह वर्णन नेत्रों के सम्मुख नाच उठा ।

कवियों की कल्पना तो

देखती ये भौएँ कलिका सी खड़ी—

छूटते हैं जिनसे आदि-रस के सम्मोहन-सर

वशीकरण मारण-उच्चाटन भी कभी-कभी ।

हारे हैं सारे नेत्र नेत्रों को हेर-हेर,—

विश्व भर को मदोन्मत्त करने की मादकता

भरी है विधाता ने इन्हीं दोनों नेत्रों में ।

.....

देख यह कपोत-कण्ठ

बाहु-बल्ली कर-सरोज

उन्नत उरोज पीन-क्षीण कटि—

नितम्ब-भार-चरण सुकुमार—

गति मन्द-मन्द,

छूट जाता धैर्य ऋषि मुनियों का;

देवों—भोगियों की तो बात ही निराली है ।

सरदार लुहारासिंह की दृष्टि मिस कामिनी के सौन्दर्य पर अटक गई; परन्तु प्रकाश बाबू के साथ उसे देखकर इस समय उनका बदन पसीना-पसीना हुआ जा रहा था । बैरिस्टर पुण्डरीकर की भी दशा मिस कामिनी को देखकर बिगड़ रही थी । उन्होंने बड़ी सावधानी से अपने कोट के बटन गले तक कस कर लगा लिए । जिससे प्रेम-कीटाणु उनके शरीर में प्रवेश न कर सकें । उन्होंने अपनी खोपड़ी पर हाथ फेरा और रौब-दाब से आँखों पर चश्मा चढ़ाते हुए गर्व से बोले, सेठ प्रकाश बाबू ! आज हमने जो मौहरा चला है, उसने भारत की नाक कहलाने वाले पूँजीपतियों के भी छक्के छुड़ा दिये ।”

“मानता हूँ बैरिस्टर साहब !” गर्व से प्रकाश बाबू कामिनी की ओर सिमटते हुए बोले । “मिस कामिनी ! आज बैरिस्टर साहब ने एक करोड़ बाईस लाख का शिकार मोरा है ।”

“एक करोड़ बाईस लाख !” नेत्रों के वाण संधानते हुए स्वाभाविक मुस्कान-छवि चारों ओर बखेर कर मिस कामिनी ने कहा ।

“आप बीच में बोल उठे प्रकाश बाबू ! वरना खा जाता मैं सेठ को ।” बैरिस्टर पुण्डरीकर बोले ।

“आपका काटा पानी नहीं माँग सकता ।” लुहारासिंह बोले ।

“मौनता हूँ ।” प्रकाश बाबू ने मुस्कराते हुए कहा, “मैं किसी को

मारने की अपेक्षा सिसकता देखने में अधिक आनन्द-लाभ करता हूँ ।”

मिस कामिनी जो अभी तक लगभग मौन ही बैठी थी, एक दम फुदक कर प्रकाश बाबू से तनिक दूर हटती हुई बोली, “एक्सीलेन्ट ! प्रकाश बाबू ! एक्सीलेन्ट ! मार देना क्या बड़ी बात है ? बात तो वह है कि मारे भी और मरने भी न दे ।” और इतना कहकर वह फिर प्रकाश बाबू से सठकर बैठ गई ।

बात साधारण थी परन्तु बैरिस्टर पुण्डरीकर ने दांत चबाने प्रारंभ कर दिये और उनके नेत्रों की लाली क्रोध की ज्वाला से दैदीप्यमान हो उठी । उन्होंने वहाँ और अधिक बैठना अपना अपमान समझा । यह कल की नादान छोकरी बैरिस्टर पुण्डरीकर की बातों के बीच में बोलने का साहस कैसे कर सकी । वह उठकर बिना एक शब्द भी बोले चल दिये । सरदार लुहारसिंह भी और अधिक न बैठ सके, क्योंकि उनकी दृष्टि मिस कामिनी के सामने ठहर नहीं पारही थी ।

ज्यों ही सरदार जी उठकर चलने को हुए तो मिस कामिनी ने मुस्कराते हुए पूछा, “क्या आप मुझे नहीं पहचानते हैं ?”

“पहचानता हूँ...परन्तु अब नहीं पहचानता ।” झुंझलाकर लुहारसिंह बोले ।

आप मुझे प्रकाश बाबू के साथ देखकर खिन्न न हों । प्रकाश बाबू इस रहस्य से भली प्रकार परिचित हैं कि आप ही लाहौर से मुझे बचा कर लाये थे, परन्तु वहाँ से बचा कर लाने के पश्चात्.....”

“मैं कुछ नहीं सुनना चाहता ।” क्रोध में भरकर खड़े होते हुए सरदार लुहारसिंह ने कहा और वह केबिन से निकल कर बैरिस्टर पुण्डरीकर के पीछे-पीछे लपक लिये ।

कामिनी को साथ लेकर प्रकाश बाबू अपनी कोठी पर पहुँचे । वहाँ जाकर उन्होंने देखा कि कविवर ‘शून्य’ जी का कविता-पाठ हो रहा था । मिस केतकी और रानी सुशीली ध्यान पूर्वक बैठी सुन रही थीं । प्रकाश

बाबू उनके बीच मिस कामिनी को लेकर पहुँच गये। उनके पहुँचने से 'शून्य' जी की कविता का तारतम्य टूट गया।

वह प्रकाश बाबू पर उबल पड़ने को ही थे कि उनकी दृष्टि मिस कामिनी पर पड़ी और एक क्षण मौन रहने के पश्चात् वह खड़े होते हुए मिस कामिनी से बोले, "मेरी कविता की साकार प्रतिमा ! परन्तु तुम प्रकाश बाबू के पास किस प्रकार पहुँच गईं। तुम्हे मेरे पास आना चाहिए था कविते !"

"भूल के लिए क्षमा चाहती हूँ कवि ! अब आगई आपके पास। कविता प्रारम्भ करो।" इतना कहकर प्रकाश बाबू तथा मिस कामिनी दो कुर्सियों पर बैठ गये। कविवर 'शून्य' जी का स्वर और भी सरस हो उठा। और उन्होंने कविता सुनानी प्रारम्भ की, परन्तु रानी सुशीला वहाँ से उठकर चली गईं। वह रसास्वादन न कर सकीं। 'शून्य' जी की कविता समाप्त होने पर प्रकाश बाबू ने मुस्कराते हुए कहा, "सौंदर्य में स्वर साधने की शक्ति है, इसका भान मुझे आज हुआ 'शून्य' जी !"

"अवधि समाप्त होने से पूर्व ही हो गया, इसका मुझे हर्ष है।" कटाक्ष के साथ व्यग्य-पूर्ण स्वर में मिस केतकी बोली।

कविवर 'शून्य' जी खिलखिलाकर हँस पड़े—मानो सब कुछ समझ गये, परन्तु उनके नेत्र कामिनी के सौंदर्य में भटक रहे थे। मिस कामिनी ने भी एक बार भेद-पूर्ण दृष्टि से कविवर 'शून्य' जी के प्यासे नेत्रों में अपने कृपा-सौंदर्य की वूँदें चुभाने का प्रयास किया। प्रकाश बाबू मिस केतकी की बात का कोई उत्तर न देकर 'शून्य' जी से बोले, "कवि ! कामिनी को हमारे कला-निकेतन की सैर तो करा लाओ।"

"अभी लीजिए।" कहते हुए शून्य जी खड़े हो गये। प्रकाश बाबू के पैसे पर आश्रित रहने पर भी 'शून्य' जी प्रकाश बाबू की आज्ञा-पालन के लिए कभी इतने उतावले नहीं हुए जितने आज थे। मिस कामिनी को साथ लेकर ज्यों ही वह कला-निकेतन की ओर चले त्यों ही उनके मार्ग में रानी सुशीला घूमती हुई आ निकलीं। वह मौन थीं, बोलीं नहीं।

कविवर 'शून्य' जी स्वाभाविक सरलता से बोले, "रानी ! मैं इन्हें प्रकाश बाबू के कला-निकेतन की सैर कराने लेजारहा हूँ। आओ तुम भी चलो।"

रानी ने कोई उत्तर नहीं दिया और वह शीघ्रता से कोठी के दाँई ओर से आगे बढ़कर पर्दा उठाती हुई अन्दर चली गई। 'शून्य' जी ने समझा कि मानो उन्होंने सुना ही नहीं, परन्तु मिस कामिनी हाथ की चुटकी बजाती हुई मुस्करा कर बोली, "आप चलते चलिए कविवर ! वह नहीं आयेंगी। आप कवि अवश्य हैं, परन्तु नारी को समझने की क्षमता अभी आपमें नहीं है।"

"नारी को समझने की क्षमता मुझमें नहीं है ?" चलते-चलते कविवर 'शून्य' जी के पैर रुक गये। "यह तुमने क्या कहा कविते ! मैंने तुम्हारे सौंदर्य का मान भर किया है, अपनी आलोचना करने का अधिकार मैंने तुम्हें नहीं दिया। तुम जहाँ चाहो, जासकती हो और प्रकाश बाबू से कहो कि वह अपना कला-निकेतन दिखलाने के लिए किसी अन्य व्यक्ति को आपके साथ करें। मैं जाता हूँ।" इतना कहकर 'शून्य' जी तीव्र गति के साथ उसी ओर बढ़ गये जिधर रानी सुशीला गई थीं। मिस कामिनी अवाक सी वहीं पर खड़ी रह गई।

×

×

×

मिस केतकी का औषधालय पहुँचने का समय हो चुका था। वह और अधिक यहाँ नहीं ठहर सकती थी। खड़ी होती हुई बोली, "अब मुझे चलना ही होगा। परन्तु आप हमारा औषधालय देखने आज तक नहीं आये। चलिए, आज मेरे साथ चलिए।"

"आपके साथ !" कुछ विचार कर प्रकाश बाबू ने कहा।

"हाँ-हाँ मेरे साथ। क्या कुछ संकोच होता है मेरे साथ चलने में ?" मिस केतकी ने पूछा।

"आज सच बात कह डालूँ मिस केतकी ! परन्तु नहीं, मैं कुछ नहीं कहूँगा। चलिए चलता हूँ, आपके साथ।" और प्रकाश बाबू खड़े हो गये।

कार चल पड़ी। शीघ्र ही दोनों बनस्थली पहुँच गये। कार सीधी जाकर औषधालय के द्वार पर रुकी। प्रकाश बाबू ने धूम-फिर कर समस्त औषधालय देखा। ऊपरी सराहना भी की, परन्तु हृदय में एक कसक पैदा होगई। बनस्थली का बदला हुआ रूप देखकर प्रकाश बाबू के मन में जलन सी होने लगी और मिस केतकी के विशेष आग्रह करने पर भी वह प्रोफेसर सुधांशु के आने तक वहाँ ठहरने के लिये उद्यत न हुए।

मिस केतकी प्रकाश बाबू के मन की उथल-उथल को भाँप चुकी थीं, इसलिए मुस्करा कर बोलीं, “प्रोफेसर सुधांशु आपको बड़ा स्नेह करते हैं। जब-जब मैंने उनसे आपकी सफलताओं के विषय में बातें की हैं तो उनका हृदय खिल उठा है और वह आपकी प्रशंसा और योग्यता के पुल बाँध देते हैं परन्तु आज देख रही हूँ कि आप मेरे औषधालय को देखकर प्रसन्न न हो सके।”

“हो क्यों नहीं सका मिस केतकी ? परन्तु कहाँ यह घुड़सालों जैसे कोठड़े और कहाँ तुम जैसी योग्य डाक्टरनी ? तुम्हारे लिए मैं इतना बड़ा औषधालय खोल सकता हूँ कि जो समस्त भारत में ख्याति प्राप्त कर सके और देश के कोने-कोने में तुम्हारे नाम की धूम मच जाये। देश-देशांतरों के लोग तुम्हारी योग्यता का लोहा मानें। हमारे प्रकाशन-विभाग द्वारा कविवर ‘शून्य’ जी की लेखनी से तुम्हारी योग्यता की विज्ञप्ति हो और देश के कोने-कोने में एक बार तुम्हारा नाम गूँज उठे।” गम्भीरता पूर्वक प्रकाश बाबू ने कहा।

प्रकाश बाबू के शब्द सुन कर मिस केतकी का हृदय द्रवित हो उठा और कोमल भावनाएँ मोम के समान पिघलने लगीं। प्रकाश बाबू ने जो कुछ भी कहा, वह सब कुछ कर सकते थे, वह सब कुछ उनकी शक्ति में था। वह मौन हो गईं। इसी समय प्रोफेसर सुधांशु तथा नियाज़ अहमद खेल के मैदान से एक बच्चे को लिए हुए वहाँ आपहुँचे। बच्चे के हाँका खेलते हुए सिर में गहरी चोट आई थी। मिस केतकी सब कुछ

भूलकर बच्चे की डाकूरी करने में व्यस्त होगई और इसी बीच में प्रकाश बाबू चले गये ।

: १५ :

आज की बातों का प्रभाव मिस केतकी के मस्तिष्क पर विभिन्न रूप से पड़ा । प्रकाश बाबू के साथ जो नई स्त्री आज उन्होंने देखी उसके सौंदर्य-चमत्कार के सम्मुख मिस केतकी का रूप खोज कर रह गया । उसके मुग्ध-यौवन की छाया में उनका उभरता हुआ आशा-विटप कुम्हला गया । रानी सुशीला की बात और थी, पर इस नावगंतुक ने तो मिस केतकी के विचारों का दृष्टिकोण ही बदल दिया । नारी के प्रति प्रकाश बाबू का आकर्षण उसी प्रकार था जिस प्रकार माली का किसी वाटिका से कुसुम बीनना । माली पुष्पों की माला बनाते समय सुगंध और सौंदर्य दोनों ही दृष्टिकोण से माला बनाता है । प्रकाश बाबू भी नारी के दोनों ही गुणों पर रीझते थे । आज मिस कामिनी के साथ प्रकाश बाबू से भेंट हुई तो कल मिस मालती उनके साथ थीं, जिनमें सुन्दर कहने के लिए कुछ था ही नहीं । न वेश-भूषा किसी काम की थी और न नख-शिव का आकार और रूप-रंग ही । उसका कण्ठ-माधुर्य अद्वितीय था । मालती का जीवन संगीतमय था और उसी सरस-रस की धारा को गले में पहने प्रकाश बाबू उसी प्रकार मुग्ध थे जिस प्रकार आज इस फूल से यौवन की प्रतिमा के साथ मुस्करा रहे थे ।

मिस केतकी ने आज प्रथम बार विचार कर देखा कि प्रकाश बाबू के सम्पर्क से किसी भी व्यक्ति का एकाङ्गी विकास सम्भव हो सकता है सर्वाङ्गी नहीं । जीवन के विभिन्न पहलुओं पर झाँकने का उनके पास अवकाश नहीं था और जिस पहलू पर वह झाँकते भी हैं, उस पर भी आर्थिक नाप-तोल के साथ विचार करते हैं ।

आज प्रकाश बाबू मिस केतकी से कुछ कहते-कहते रुक गये । वह

क्या कहना चाहते थे, यह केतकी न समझ सकी, परन्तु उनके कहते-कहते रुक जाने में उनकी असफलता का आभास मिलता था ।

प्रोफेसर सुधांशु बोले, “आज प्रकाश बाबू को तुम इस ओर कैसे घसीट लाई मिस केतकी ?”

“कई बार आप्रह करने के पश्चात् आज न जाने किस प्रकार उनका मन मेरे साथ यहाँ आने का होआया, परन्तु मैंने देखा कि यहाँ आकर उन्हें प्रसन्नता नहीं हुई । उन्हें यह दुःख हुआ कि मैं अपनी डाक्टरी की विशेष योग्यता को यहाँ जंगल में देहाती लोगों के बीच पड़ी हुई व्यर्थ नष्ट कर रही हूँ । उन्होंने मेरे सम्मुख एक प्रस्ताव भी रखा है ।” गम्भीर मुख-मुद्रा बनाकर मिस केतकी ने कहा ।

“क्या सुन सकता हूँ मैं भी उनके प्रस्ताव को ?”

“अवश्य ! वह कहते हैं कि वह मेरे लिए एक बहुत बड़ा औषधालय खोलने को तैयार हैं, जिसकी ख्याति भारत के कोने-कोने में उनके विज्ञापन-विभाग द्वारा की जायगी और इस प्रकार वह मुझे भारत की सर्व-प्रसिद्ध डाक्टरनी घोषित करके मेरे नाम का डंका दिग्दिगन्त में पिटवा देंगे ।”

“प्रस्ताव तो बहुत सुन्दर है और वह कर भी सकते हैं ।”

“तब क्या आप मुझे अपने इस औषधालय से मुक्त कर सकेंगे ?”

“यदि मुक्ति पाने वाला व्यक्ति मुक्ति चाहे तो मेरे हाथों में उसे बाँधने की क्या शक्ति है ? और फिर यह औषधालय तो मेरा नहीं है, तुम्हारा ही है । तुम्हीं ने इसे प्रारंभ किया है, तुम्हीं चाहो तो बन्द भी कर सकती हो ।”

“आज प्रकाश बाबू मुझसे कुछ कहना चाहते थे परन्तु कहते-कहते रुक गये । क्या आप बतला सकते हैं कि वह क्या कहना चाहते थे ?”

“बतला सकता हूँ ।” घन-गर्जन के समान गम्भीर ध्वनि में प्रोफेसर सुधांशु बोले, “परन्तु यदि मुझसे पूछने ही चली हो तो तुम्हें अभी

जाकर प्रकाश बाबू से यह बात पूछनी होगी और न पूछने की दशा में मेरी बात का विश्वास करना होगा ।”

“विश्वास न करने की बात आज आपके मन में क्यों उत्पन्न हुई ?”
मिस केतकी ने पूछा ।

“क्यों कि तुम्हारे मन में मृग-तृष्णा ने जन्म ले लिया—केवल इसी लिए ।”

“मैं क्षमा-याचना करती हूँ प्रोफेसर साहब !” और मिस केतकी के नेत्र डबडबा आये । प्रोफेसर साहब ने संध्या के धूमिल प्रकाश में खड़े होकर अपनी जेब से रुमाल निकाल कर मिस केतकी के मोती जैसे अश्रुओं को सँभाल लिया और फिर मूढ़े के पीछे खड़े होकर घुँघराले वालों की गुलशतों में उँगलियाँ डाल कर सहलाते हुए धीरे से गम्भीरता पूर्वक बोले, “दूसरों की सफलता पर हृदय में जलन पैदा करलेने वाले व्यक्ति के पास असंख्य धन-राशि होने पर भी उसका दृष्टिकोण व्यापक नहीं हो सकता । वह विचार ही व्यक्ति के रूप में करता है, राष्ट्र अथवा मानव-मात्र के रूप में नहीं । प्रकाश बाबू नारी के जीवन का भी मूल्य चुकता कर देना चाहते हैं । तुम्हारा वह मूल्याङ्कन नहीं कर सके, इस को वह अपनी पराजय गिनते हैं । प्रकाश बाबू के जीवन में जय और पराजय का संघर्ष बहुत प्रखर रूप धारण करता जा रहा है । वह संसार को विजय करने का स्वप्न देख रहे हैं । अपने आर्थिक अस्त्रों के प्रयोगों से इसी अर्थ-व्यवस्था के मायाजाल में फाँसकर वह विश्व को अपना दास बना लेने का स्वप्न देख रहे हैं । तुम यदि भूल से इसे अपनी मुक्ति मान बैठें तो मैं इसे भ्रम ही कहूँगा । अपने आदर्शों को मानने के लिए बाध्य मैंने आज तक कभी किसी को नहीं किया ।” कहते-कहते प्रोफेसर सुधांशु का स्वर भर आया और वह वाणी में नरमी लाकर बोले, “जो राष्ट्रीय-जीवन की व्यवस्था का माडल मैं प्रस्तुत कर रहा हूँ उसमें सुख है, निर्माण है और अन्त में सभी के जीवन का समान रूप से सामाजिक, मानसिक, आर्थिक तथा राजनैतिक विकास है । इसके ठीक विपरीत

प्रकाश बाबू ने जो व्यवस्था प्रस्तुत की है, उसमें समानता का अभाव है, छल है, धोखा है, चालबाजी और सौदेबाजी है। भूठ है, मिलावट है, दासता है, फूट और संघर्ष है, कर्तव्य के प्रति उदासीनता है, ऊँच-नीच के भेद-भाव के साथ रईसी और निर्धनता का पारस्परिक द्वेष है। यह प्रगति परिश्रम के बल पर न होकर चानाकियो पर आश्रित है और जिस जीवन में ये दाब-घातें चलती रहेगी वहाँ कभी शांति स्थापित नहीं हो सकती।” कहते-कहते आज प्रथम बार प्रोफेसर सुधाशु के दोनों हाथ बालों की उलझन से मुक्त होकर केतकी के कपोलों पर उतर आये।

इसी समय पीछे से किसी के आने का शब्द हुआ। प्रोफेसर सुधाशु ने घूम कर देखा, बहन सुभद्रा थी, जो अपनी मस्ती में भूमती हुई आकर दोनों के बीच में खड़ी हो गई और मुस्कराती हुई बोली, “मुना है डाक्टरनी जी ! तारों भरी रात में ही प्रेमांकुर विशेष सुविधा के साथ फूटता है। मैं तो जन्म की विधवा ठहरी—कभी जाना ही नहीं कि प्रेम किसे कहते हैं ?”

“तू बड़ी मक्कार होती जा रही है सुभद्रा ! आगे बढ़ कर बत्ती तो जला दे। मैं सोच ही रही थी कि तू आने वाली होगी। और हाँ ! दूध का ट्रक क्या चला गया शहर को ?”

“कभी का चला गया डाक्टरनी जी ! अब तो नियाज़ बाबू आने ही वाले होंगे।”

“सुभद्रा ! तुम्हारा कार्य विशेष रूप से सराहनीय है। जब तुम्हारे कार्य की संलग्नता पर दृष्टि डालता हूँ तो श्रद्धा से भारतीय नारी की कर्तव्य-परायणता के सम्मुख मस्तक झुक जाता है।”

सुभद्रा का हृदय प्रोफेसर सुधाशु के ये शब्द सुनकर अन्दर-ही-अन्दर आनन्द के हिंडोले पर झूल उठा और उसने इठलाते हुए आगे बढ़-कर बत्ती जला दी।

प्रोफेसर साहब का प्रौढ़-शिक्षा-केन्द्र में जाने का समय हो गया था।

विदा होते समय बोले, “अच्छा केतकी ! अब मुझे प्रौढ़-शिक्षा केन्द्र में जाना है । तुम्हें यह जानकर प्रसन्नता होगी कि अब हमारे इस केन्द्र में आस-पास के पाँच गाँवों के प्रौढ़ व्यक्ति शिक्षा प्राप्त करने के लिए आने लगे हैं और उन सभी ने प्रण किया है कि वे सब लोग मिलकर अपने-अपने गाँवों में वे सब सुधार करने के प्रयत्न करेंगे जो हमने बनस्थली में किये हैं ।”

“आज मैं भी आपके साथ चलूँगी प्रोफेसर साहब ! न जाने क्यों आज मेरे मन में विचित्र सी उथल-पुथल होरही है ?”

“हाँ-हाँ चलो । मैं तो स्वयं ही कहने वाला था । संकोचवश नहीं कहा कि कहीं तुम चलना पसंद न करो । अपना विषय तुम स्वयं सँभालो ।”

आज मिस केतकी ने प्रौढ़-शिक्षा-केन्द्र में स्वास्थ्य और स्वच्छता की आवश्यकता पर एक घंटा भाषण दिया । प्रोफेसर सुधाशु भी भाषण को सुनकर मन्त्र-मुग्ध हो गये ।

केतकी के भाषण का यह प्रभाव पड़ा कि दूसरे दिन से ही प्रौढ़-शिक्षा-केन्द्र में पुरुषों के साथ-साथ स्त्रियों ने भी भाग लेना प्रारम्भ कर दिया और दिन-प्रति-दिन उनकी संख्या बढ़नी प्रारम्भ होगई । मिस केतकी ने अब प्रोफेसर सुधाशु के कार्य-क्रमों के विभिन्न पहलुओं पर सक्रिय सहयोग देना प्रारम्भ कर दिया । इससे कार्य में विशेष गति आगई । बनस्थली के आस-पास स्थित गाँवों में लुहार, बढ़ई, जुलाहे गड़रिये तथा ग्वाले रहते थे ।

प्रोफेसर सुधाशु ने जिस प्रकार जूतों की सहकारी सोसाइटी स्थापित की थी उसी प्रकार लोहे लकड़ी की खड्डियों इत्यादि की भी अन्य सोसाइटियाँ स्थापित कीं । उन सब का केन्द्र बनस्थली में बना और वहीं से माल देश के कोने-कोने में भेजा जाने लगा । पाँचों गाँवों ने मिलकर अपना एक संघ बना लिया और उन अभी के उत्पादन का निरीक्षण एक पाँचों गाँवों की चुनी हुई पंचायत के द्वारा किया जाने लगा ।

“केतकी ! तुम्हारी तपस्या ने मेरा स्वप्न साकार कर दिया । अब हमारा यह संघ सब प्रकार से अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति में सफल है । संघ के प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में काम आने वाली हर सामग्री का उत्पादन हमारे यहाँ होता है । अब हम अपनी आवश्यकताओं के लिए किसी पर आश्रित नहीं हैं और न ही रहना होगा ।”

“हमारा संघ न केवल अपनी ही आवश्यकताओं की पूर्ति में सफल है प्रोफेसर साहब ! बल्कि देहली जैसे विशाल नगर की भी आवश्यकताओं में सहयोग प्रदान कर रहा है । देहली के जिस भाग को बनस्थली-डेयरी दूध, घी और मक्खन पहुँचाती है उसके भाग्य पर नगर के अन्य भागों को डाढ़ होने लगी है ।” केतकी ने कहा ।

“सच केतकी !” प्रोफेसर साहब के नेत्र चमक उठे और उनका मस्तक ऊँचा हो गया ।

मिस केतकी, “कल जब मैं बहन सुभद्रा के साथ शहर में बन-स्थली-स्टाल का निरीक्षण करने गई तो उसकी व्यवस्था देखकर मैं भाई नियाज़ अहमद की कार्य-कुशलता की सराहना किये बिला न रह सकी । हमारे माल की स्वच्छता और शुद्धता के कारण एक-एक सप्ताह के अगाऊ आर्डर हर समय रजिस्टर में दर्ज रहते हैं और उनका अगाऊ रुपया भी पहले ही जमा होजाता है ।”

ये बातें चल ही रही थीं कि नियाज़ अहमद ने सामने टुक लाकर खड़ा करते हुए उतर कर सूचना दी, “प्रकाश बाबू का कपड़ा-मिल बन्द हो गया ।”

“कैसे ?” आश्चर्य प्रकट करते हुए दुःख के साथ मिस केतकी ने पूछा ।

“इसलिए कि जो माल काले बाजार में बेचने के लिए गोदामों में सरकारी अफसरों को घूस दे-दे कर जमा कर लिया था अब विश्व-युद्ध की सम्भावना न रहने पर मन्दा होगया । आज कोला व्यापार करने वालों की नौका ड़ाँवाडोल है । अब देखनी है बैरिस्टर पुण्डरीकर की वह

विशेष योग्यता की केन्द्र खोपड़ी और सरदार लुहारसिंह की मिट्टी को सोना बनाकर बेचने वाली कार्य-कुशलता कहाँ तक अपना चमत्कार दिखलाती है।” कहकर नियाज़ अहमद ने गर्व के साथ मूछों पर ताव दिया और उभरी छाती लेकर सामने पड़े मूढ़े पर बैठ गये।

“भूली नहीं होगी केतकी ! गत वर्ष के सर्दी के मौसम को। उन भयंकर रात्रियों को जब अपने ही मिल के कर्मचारियों को भी कन्ट्रोल-मूल्य पर प्रकाश बाबू ने कपड़ा देना स्वीकार नहीं किया था और हमें रात-दिन अपनी खड्डियों पर एक गाढ़ा तथ्यार करना पड़ा था जिससे तीन हजार लिहाफ़ तथ्यार करके हमने लागत मात्र पर मिल-मजदूरों को दिये थे। उस समय भी यह कपड़ा इनके गोदामों में बन्द पड़ा था।”

“सात रुपये की धोती सत्ताईस रुपये की बिकी। आज चले हैं सरकार को चुनौती देने, कि यदि इसी प्रकार कपड़े का भाव गिरता गया और सरकार ने उसे न रोका तो मिल बन्द कर देंगे। मजदूर बेरोज़गार हो जायेंगे। देश में अशांति फैल जायगी ? परन्तु क्यों ? यह सब क्यों होगा ? सरकार मिल स्वयं चला सकती है। मोटी-मोटी रकमें जो मैनेजिंग एजेंट खा जाते हैं और जिन्होंने जनता के रुपये को खा-खा कर जनता का विश्वास सामूहिक योजनाओं से उठा दिया है, उन्हें मुक्त कर दिया जायगा। मिस केतकी ! अब वही जीवित रहने का अधिकारी होगा जो जीने और जीने देने के सिद्धान्त का अनुसरण करेगा।”

प्रोफ़ेसर सुधांशु और मिस केतकी चुपचाप बंठे रहे। दोनों ने प्रकाश बाबू के पास जाकर उनकी इस हानि के प्रति सहानुभूति प्रकट करने का निश्चय किया। मिस केतकी और प्रोफ़ेसर सुधांशु प्रकाश बाबू की कोठी पर पहुँचे तो वहाँ दावत का आयोजन हो रहा था। दावत में प्रकाश बाबू के कुछ प्रमुख व्यापारी मित्र, कुछ भारतीय संसद के सदस्य, कुछ विभिन्न राजनीतिक दलों के प्रतिनिधि तथा कुछ यूनियनों के पदाधिकारी उपस्थित थे।

प्रोफ़ेसर सुधांशु दावत का आयोजन देखकर लौटने लगे, परन्तु

‘शून्य’ जी की दृष्टि उनपर पड़ गई और वह नंगे पैरों ही उनकी ओर दौड़ पड़े। चिल्लाकर बोले, “प्रोफेसर साहब ! आप आये, और चल भी दिये ! ऐसे शुभ अवसर पर आपका आना नितांत आवश्यक है। देखिये न ! सभी दलों के प्रतिनिधि मिलकर सरकार की नीति का विरोध करने के लिए एकत्रित हैं। सरकार की जिस नीति के फल-स्वरूप उत्पादन बन्द हो जाय और कर्मचारी बेकाम हो जायें उसकी आप अवश्य निंदा करेंगे। आज की इस दावत में उन्हीं व्यक्तियों को निमंत्रित किया गया है जो सरकार की इस नीति की निंदा करें।”

‘शून्य’ जी की बातें सुनकर प्रोफेसर सुधांशु मुस्करा कर बोले, “कवि ! तुमने इतने दिन प्रकाश बाबू के सम्पर्क में रहकर भी अपना सम्बन्ध बुद्धि से स्थापित नहीं किया। प्रकाश बाबू का अनुमान ठीक है कि मैं उनके प्रस्तावों का समर्थन नहीं कर सकूंगा, इसीलिए उन्होंने मुझे इस दावत में निमंत्रित नहीं किया।

कविवर ‘शून्य’ जी चुप होगये। प्रोफेसर साहब की बात का क्या उत्तर दें, यह उनकी समझ में न आया। अन्त में केवल इतना ही कह कर उन्होंने संतोष किया, “चलिए ठीक ही है, जो आपने कहा, परन्तु आपने आज इतने दिन पश्चात् भी मुझे मूर्ख समझना नहीं छोड़ा, यह जानकर मुझे खेद हुआ। सम्भवतः आपने मेरे सम्पादित पत्रों पर कभी दृष्टि डालने का कष्ट नहीं किया। यदि आपने उन्हें देखा और पढ़ा होता तो आप प्रकाश बाबू से मेरे मस्तिष्क की तुलना न कर बैठते।”

“यह तो वास्तव में आपने बहुत बुरी बात की प्रोफेसर साहब, कविवर ‘शून्य’ जी के सम्पादित पत्र मैंने देखे और पढ़े हैं। मैं ‘शून्य’ जी के मत से सहमत हूँ।”

इतना कहकर वह कनखियों से मुस्कराते हुए फिर बोलीं, “अरे ! आप तो नंगे ही पैर चले आ रहे हैं।” अपने पैरों की चप्पलें निकाल कर उनके सामने करते हुए बोलीं, “लीजिए इन्हें पहन लीजिए;

यदि पैर में कोई काँटा चुभ गया तो बेचारी रानी सुशीला के सम्मुख हम लोग मुँह दिखलाने योग्य भी न रहेंगे ।”

फिर मिस केतकी और प्रोफेसर साहब ने ‘शून्य’ जी को लौट कर दावत में भाग लेने की सलाह दी और उनके लौट जाने पर दोनों व्यक्ति बनस्थली की ओर धीरे-धीरे घूमते हुए चलदिये । संध्या का झूबता हुआ सूर्य इस समय उनकी पीठ के पीछे था और उनकी लम्बी-परछाईं भी कई-कई सौ गज लम्बी उनके सामने-सामने चल रही थीं । दोनों मीन मुद्रा में एक दूसरे का हाथ में हाथ लिए बनस्थली तक चले गये । प्रोफेसर सुधांशु ने आज की इस प्रकाश बाबू की दावत में मानव-जीवन की विडम्बना का वह रूप देखा जिसमें व्यक्ति का हृदय रोता है और चेहरा मुस्कराता है । जो अन्दर से निर्जीव हो चुका, उसकी सुरक्षा बाहरी बनावट नहीं कर सकती ।

सुधांशु बोले, “जीवन की विडम्बना का निखरा हुआ रूप तुमने देखा केतकी !”

“देखा और बहुत स्पष्ट देखा ।” स्पष्टता पूर्वक केतकी ने कहा ।

“जन-जोवन से खिलवाड़ करने का हमें कोई अधिकार नहीं है । हमारी योजनाओं द्वारा मानव की उपयोगिता को बढ़ाने का प्रयत्न किया गया है और प्रकाश बाबू ने दूसरों के जीवन की उपयोगिता पर अपना अंकुश रख कर उनके भाग्य को कुछ चरित्रहीन व्यक्तियों की स्वार्थ-सिद्धि का साधन मात्र बना दिया है । जानती हो इसका परिणाम क्या होगा ?”

“कलह, अशांति, भूख, सघर्ष, द्वेष, अप्रगति और अन्त में विनाश ।” मिस केतकी ने कहा ।

: १६ :

सोने का बाजार बन्द होगया । चाँदी का सट्टा बन्द हो गया । कपड़े वाले दूकानदारों ने राशन के कोठे उठाने बन्द कर दिये । गुड़ का बाजार पानी की तरह बह गया । चीनी मन्दी हो गई । मतलब यह कि जिस बाजार में भी निकल जाओ, मन्दी थी । ग्राहक ने माल पर हाथ रखना बन्द कर दिया । आज से कल और कल से परसों अधिकाधिक दाम गिरजाने का स्वप्न हर व्यापारी देखने लगा । अनेकों के दिवाले निकल गये ।

माल के दाम गिरजाने से बैंकों ने व्यापारियों पर रुपया पूरा करने के नोटिस भेज दिये । बाजारों में उथल-पुथल मच गई । ज़ेवर वालों के ज़ेवर बिक गये और मकान वालों के मकान । वह समय आगया कि जब बाज़ार में बेचनेवाला था और लेने वाला नहीं । कारोबार ठप्प होगये और प्रत्येक दिशा में बेचनी पैदा होगई । लम्बे-लम्बे स्टोक करके काला बाजार करने वालों की तो हिम्मत ही पस्त हो गई । 'अब खाई सो खाई, आगे राम दुहाई' वाली कहावत को आधार मानकर किसी प्रकार कुछ साहसी व्यापारी समय की प्रतीक्षा करने लगे, परन्तु न खाने में मन लगता था और न पहनने में ।

प्रकाश बाबू ने व्यापार के क्षेत्र में जो खेल खेला था उसमें आज तक उलटे पासे के दर्शन उन्होंने नहीं किये थे । जब सरकार ने बैंकों के डाइरेक्टरों को अपने बैंकों से रुपया उधार लेने से बंचित कर दिया था तो प्रकाश बाबू ने उसी फेर में चार बैंकों को निगल लिया । बिना डाइरेक्टर बने ही उनके पचपन प्रतिशत हिस्से उनके नाम हो गये और इस प्रकार उन्हें अब रुपये की कमी नहीं रही थी । परन्तु इस मन्दी की लहर ने प्रकाश बाबू का पासा पलट दिया । उन्हें रह-रह कर आज सरदार लुहारासिंह पर क्रोध आरहा था । सरदार जी की ही सलाह से प्रकाश बाबू के गोदामों में माल भरा पड़ा था ।

दो बार गुप्त रीति से कपड़ा पाकिस्तान भेजने का प्रबन्ध किया

परन्तु माल सीमा पर पहुँचने से पूर्व ही पकड़ा गया। किसी प्रकार ले-देकर प्राणों की रक्षा की परन्तु माल से तो हाथ धोने ही पड़े। इस प्रकार जितना रुपया काले बाज़ार में कमाया था वह सब निकल गया और उल्टी गाँठ की पूँजी के भी हाथ से जाने की नौबत आगई।

सरदार लुहारासिंह और बैरिस्टर पुण्डरीकर ने अपने कमीशन के रूप में जो रुपया कमाया था वह भी किसी चाल से प्रकाश बाबू ने अपने ही किसी काम में लगवा लिया था। माल पाकिस्तान भेजने की योजना सरदार लुहारासिंह ने ही तय्यार की थी और माल मार्ग में ही पकड़े जाने से उनका चित्त आज बहुत खिन्न था। जब उन्होंने प्रकाश बाबू को आकर यह अशुभ सूचना दी तो प्रकाश बाबू मिस कामिनी के पास बैठे बातचीत कर रहे थे।

“आपने भी अपने चारों ओर अच्छा खासा चिड़ियाघर बना रखा है।” कामिनी बोली।

“क्यों?” मुस्कराते हुए प्रकाश बाबू ने कामिनी से पूछा।

“एक तो ‘शून्य’ जी हैं जिन्हें आप कल्पना का केन्द्र और अनुभूति का स्रोत कहकर पुकारते हैं। मैं उन्हें मूर्ख और असभ्य जानवर समझती हूँ।”

“यह किस लिए?” प्रकाश बाबू ने पूछा।

कामिनी, “किस लिए? यदि यही पूछना है तो सुनिए। न उन्हें बातें करनी आती हैं और न सभ्यता से ही उनका कोई सम्बन्ध है। बालों में कंधा न कर, उन्हें अस्त-व्यस्त फैलाये रखना उसकी दृष्टि में एक महान् कला है। इसे मैं जंगलीपन के अतिरिक्त और कुछ नहीं मानती। शेरवानी के ठीक से बटन तक लगाने की भी उसमें योग्यता नहीं है। यदि आप ध्यान पूर्वक देखें तो आपको उनके पायजामे के कमरबन्द का फुँदना सर्वदा कमीज़ से नीचे ही लटकता दिखलाई देगा। पायजामा चाहे नया हो या पुराना, उसकी नीचे की मोहरी सर्वदा फटी

मिलेगी। जूते पर पालिश न कराने की तो मानो उन्होंने शपथ ली हुई है और फीते शायद ही जूते के दो-चार छेदों में पिरोहे हुए हों।”

“परन्तु कामिनी ! यह जो कुछ भी तुमने वर्णन किया यह कवि का बाहरी रूप है। इसके आधार पर उनका मूल्यांकन नहीं किया जा सकता।”

“परन्तु उनका भेजा और गुर्दा निकालकर परखने का अवकाश किसके पास है प्रकाश बाबू ! जीवन में परखने के लिए एक ‘शून्य’ जी महोदय ही तो नहीं रह गये है। मैंने जटिल मार्ग पर चलकर अन्वेषण करने और व्यर्थ में अपने आपको छिछली महानता के भ्रम से फँसाना नहीं सीखा है प्रकाश बाबू ! मैं तो जीवन को ज्यों-का-त्यों देखती हूँ— उसमें जो भोग लिया वह अपना है और जो छूट गया वह दूसरों का।”

प्रकाश बाबू कामिनी के ये शब्द सुनकर अवाक रह गये। प्रसंग और आगे बढ़ाने के लिए उनके पास साधन नहीं था और न शब्द ही, मानो कामिनी ने उनके मुख पर मुहर लगा दी थी। बहुत साहस करके उन्होंने कामिनी के मुख-मण्डल पर देखा और देखा कि उससे सौंदर्य की किरणें फूटी पड़ रही थीं। जीवन के विकास की वहाँ पर सीमा थी और वह जीवन इस समय प्रकाश बाबू को बार-बार चुनौती देकर कह रहा था, “खूब व्यापारी हो तुम भी ! बड़े आये हो सौदेवाज बनकर। यह भोलीभाली सुशीला का सौदा नहीं जिसे कुँजड़े की टोकरी से मूली गाजर के समान खरीद लिया। सौदा भी कभी-कभी व्यापारी को खरीद लेता है।”

प्रकाश बाबू व्यापार के क्षेत्र में अब दक्षता को प्राप्त कर चुके थे। वह अचानक ही उदासीन होते हुए बोले, “अच्छा कामिनी ! अब तुम कल मिलना। मेरे पास आज समय का अभाव है, क्योंकि कुछ आवश्यक पत्रों के उत्तर देने हैं। व्यापारिक उथल-पुथल के इस युग में क्षमा करना मैं तुम्हारे साथ अधिक समय नहीं दे सकूँगा। सम्भव है जीवन में फिर अवकाश मिल सके और हम लोगों की संभावनाओं को

प्रणय तक पहुँचने में सफलता भी प्राप्त हो।” इतना कहकर प्रकाश बाबू ने झूठ-मूठ ही कुछ फाइलें उलटनी-पलटनी प्रारम्भ कर दीं। और फिर लुहारसिंह जी की ओर मुख करके गम्भीरता पूर्वक बोले, “सरकार के पुलिस-विभाग में जो ये नये छोकरे आजकल घुस आये हैं इन लोगों ने सब चौपट कर दिया। यदि यह माल पाकिस्तान पहुँच जाता तो हमारा बहुत सा घाटा पूरा होजाता।”

“जी प्रकाश बाबू ! इसी लिए तो यह आयोजन किया गया था।”

पूरी बात भी न कहने पाये थे कि बैरिस्टर पुण्डरीकर सामने से आगये और कड़क कर बोले, “सब चौपट कर दिया। अगर इतना माल यहाँ पर घाटे से ही बेच दिया जाता तो मिल बन्द होने की तो नौबत न आती। जिन व्यक्तियों का बुद्धि से कोई सम्बन्ध नहीं, उनके हाथों में व्यापार को फँसा देने से काम की यही दशा होती है। तुनक कर इतना कहते हुए वह सोफे पर विराजमान होगये।

सरदार जी मन-ही-मन समझ गये कि यह भुँभलाहट कई दिन से कमीशन का बँटवारा न होने के कारण बैरिस्टर पुण्डरीकर के स्वभाव में आगई है। संध्या को बार-रूम में जहाँ पाँच हजार के नीले-नीले नोट उन्होंने बैरिस्टर पुण्डरीकर ने सामने फेंके और बस, शिष्य बना कर लाख तारीफों के पुल बाँध देंगे। पुण्डरीकर का यह वाक्य सुनकर भी जब सरदार जी चुप रहे तो पुण्डरीकर नाटकीय ढंग से बिगड़कर बोले, “देश-विदेश का ध्यान नहीं, अपना और पराये का ध्यान नहीं...”

लुहारसिंह, “बस जाने दीजिए। अधिक न बहकिये।” बीच ही में सरदार जी कड़क कर बोले, “इन व्यर्थ की अनर्गल बातों में कुछ नहीं रखा है। भाग्य को बदलना आपके हाथ की बात नहीं। अच्छा करते हुए भी कभी-कभी बुरा होजाता है।”

“मैं ऐसा नहीं मानता। संसार बुद्धि से संचालित है और संसार में बुद्धिमान व्यक्ति ही जीवित रह सकता है।” इतना कहकर उन्होंने अपनी खोपड़ी पर अभिमान के साथ हाथ फेरते हुए कहा, “इसका प्रमाण

चाहते हो तो सुनो, “हम कपड़ा-मिल और तेल-मिल की समस्त हानि को तुम्हें सरकार से वसूल करके दिखला देंगे।”

“सरकार से !” एक दम उछल कर बैरिस्टर पुण्डरीकर की पीठ ठोकते हुए प्रकाश बाबू बोले, “बहुत बड़ा पुरस्कार दूँगा। बैरिस्टर पुण्डरीकर की कोठी ठीक महल के सामने बनेगी।”

लुहारासिंह, “और लुहारासिंह की ?” तनिक बिगड़ कर लुहारा सिंह जी ने पूछा।

प्रकाश बाबू मुस्कराकर बोले, “उसकी बगल में।”

और लुहारासिंह जी भी प्रसन्न थे।

× × ×

× × ×

× × ×

कामिनी के रहने के लिए एक कोठी प्रकाश बाबू ने देदी थी और आजकल उसने उसी में रहना प्रारम्भ कर दिया था। कामिनी ने अपने जीवन में केवल सौंदर्य का विकास किया था और उसके इस विकास में प्रकृति का सहयोग भी उसे खूब मिला था। अपने गोल गुलाबी गालों की सुन्दर कान्ति जब उसे सामने शीशे में दिखलाई दी तो उस ने अभिमान पूर्वक कहा, “यह सौंदर्य देवताओं को भी दुर्लभ है। प्रकाश बाबू ! तुम अभी बच्चे हो। सौंदर्य का सौदा करने का तुम्हारा भ्रम मैं मिटा कर रहूँगी। तुम्हें जिस धन पर अभिमान है वह निर्जीव है। मेरा यौवन बोलता है, मेरा सौंदर्य निमंत्रण देता है और मेरा मन विश्व पर छाजाने के लिए उतावला हो उठा है।”

उस दिन ‘शून्य’ जी कामिनी का अपमान करके चले गये थे। कामिनी उसे भुला न सकी। उसने कामिनी को कविता कहकर सम्बोधित किया और कविता उसके जीवन की साधना थी। साधना के प्रति साधक कभी उदासीन नहीं हो सकती। इसलिए उसे विश्वास था कि किसी-न-किसी दिन वह उसके पास अवश्य आयेगा और वह वास्तव में आये। वह आज ही आये। इस समय कामिनी को कवि की आवश्यकता थी। प्रकाश

बाबू के व्यवहार से उसका मन खिन्न होगया था, परन्तु हृदय के भावों को मुख से व्यक्त करना कामिनी ने नहीं सीखा था ।

‘शून्य’ जी का कामिनी ने खड़े होकर आदर-भाव से सत्कार किया और फिर वह उन्हें अपने कमरे में ले गई । उन्हें सोफे पर बिठलाकर स्वयं पास वाली कुर्सी पर बैठाई । ‘शून्य’ जी की दृष्टि एक कोने में रखे इकतारे पर पड़ी और उन्होंने प्रश्न किया, “क्या आपको संगीत में भी रुचि है ?”

“रुचि किस चीज से नहीं है यह पूछिये कवि ?” इतना कहकर वह उसी प्रकार मुस्करा दी जिस प्रकार मुस्कराने पर पहले दिन ‘शून्य’ जी कामिनी को छोड़कर भाग खड़े हुए थे । परन्तु आज की मुस्कान ने कुछ और ही प्रकार से ‘शून्य’ जी को प्रभावित किया । ‘शून्य’ जी स्वयं जाकर इकतारा उठा लाये और उन्होंने उस पर एक स्वर साधा । स्वर का साधना था कि कामिनी के होठ फड़कने लगे । उसके कण्ठ की मधुर ध्वनि ने कमरे के वायु-मण्डल को मीठे स्वर से भर दिया । मधुर संगीत की स्वर-लहरियों से कमरे का शांत वायु-मण्डल गुंजायमान हो उठा । कामिनी के संगीत में कवि ने भी अपना स्वर मिला कर प्राण फूँक दिये । दो प्राणी एक स्वर होकर एक दूसरे के निकट आगये और संगीत के अन्तिम स्वर संधानने से पूर्व कामिनी कविवर ‘शून्य’ जी से सठकर बैठ गई । कामिनी गा रही थी :

‘जीवन का पल-पल सुखमय हो ।’

संगीत समाप्त होगया परन्तु कामिनी उसी प्रकार निस्संकोच भाव से ‘शून्य’ जी से सठकर बैठी रही और अन्त में उठकर उसने अपने चाँदनी से सुन्दर बदन को पास में पड़े सोफे पर फैला दिया । परन्तु ‘शून्य’ जी पर उसका कोई प्रभाव न हुआ । वह बुद्धि-विहीन से बैठे रहे ।

कामिनी ने मुस्कराते हुए कहा, “कवि ! कल्पना की कविता करते

हो । जीवन की कविता से सम्बन्ध स्थापित करो । कल्पना की कविता को लेकर जीवन में कहाँ तक चल सकोगे ?”

“मैं जीवन से ऊब चुका हूँ कामिनी ! नहीं, कामिनी नहीं, तुम्हें कविते कहूँगा । तुम्हारे अन्दर सौन्दर्य और स्वर का सामजस्य है । यदि कल्पना और भावना भी आकर तुम्हारे जीवन में प्रवेश कर जाती तो एक बार भारतवासियों को फिर से मीरा के दर्शन होजाते । तुम्हारे इस अभाव की पूर्ति के लिए मैं अपना जीवन भेंट करता हूँ ।”

“मेरे अभाव की पूर्ति करने से पूर्व अपने अभाव की पूर्ति करने का प्रयत्न करो कवि ! जो व्यक्ति जीवन के प्रति उदासीन है उससे मेरा मेल नहीं हो सकता । प्रकाश बाबू जीवन का उपभोग करना जानते हैं, इसीसे मेरा जीवन उनसे टकरा गया, परन्तु वह जिससे भी टकराते हैं उसे या तो खा जाना चाहते हैं या चकनाचूर कर देना—बस यही पर मेरा उनसे मतभेद है । मैं अपनी स्वतंत्र सत्ता को किसी भी मूल्य पर खो देने के लिए उद्यत नहीं हूँ । इसके लिए मैं अपने प्राणों का भी बलिदान चढ़ा सकती हूँ ।”

“बलिदान ! यह तुमने क्या कहा कविते ! तुम्हारे कोमल मुख से ये कठोर शब्द शोभा नहीं देते । अभी-अभी कितने मधुर स्वर में तुम प्रेमालाप कर रही थी और अब प्राणों के बलिदान की बात कर रही हो ।”

कामिनी का अट्टहास कमरे के वायु-मण्डल को चीरता हुआ बाहर निकल गया । कामिनी कुछ बोली नहीं । वह गुनगुना रही थी । एक मधुर संगीत की स्वर लहरी उसके अधरों से फूट निकली :

मैं जीवन में हँसने आई
अभी - अभी फूटा है यौवन,
धुँधराली काली अलकों से
अभी - अभी छूटा शैशवपन ।

मैं क्रीड़ा की मधुर पहेली

मुझे न छूना;

मँडराना, माना, मुख-छवि पर,

रहे न जिससे यह जीवन-क्षण

रे अलि ! सूना ।

मुझे न छूना ।

विकसित होने दो नव जीवन ।

अभी-अभी फूटा है यौवन ।

संगीत-स्वर धीरे-धीरे कमरे के वायु-मण्डल में विलीन हो गया और कविवर 'शून्य' जी मंत्र-मुग्ध से कमरे की छत पर देखते रहे । उनका मन कला-लोक में विचरण कर रहा था और आत्मा परमानन्द को प्राप्त कर चुकी थी । प्रकाश बाबू के सम्पर्क में आने के पश्चात् आज प्रथम बार वह संसार की मोह-माया से अपने को मुक्त करके कला के विशुद्ध वातावरण में विचरण कर पाये थे । प्रकाश बाबू के कला-निकेतन की क्रतियों में 'शून्य' जी ने अपने मन से जो महत्व कामिनी को दिया वह अन्य कोई अन्य कृति प्राप्त न कर पाई ।

“गीत पसन्द आया कवि !”

“गीत की गायिका भी ।”

“यह कल्पना का गीत नहीं है कवि ! इसमें मेरे उभरते हुए यौवन का विकास है । कला का वास्तविक दर्शन है । यह छाया-माया का खोखला स्वरूप नहीं है, मधुर रस का संचार है । इसकी धारा में से एक चुल्लू मधु पीकर तुम सच्चे कवि बन सकते हो ।”

“अवश्य बन सकता हूँ कविते ! तुम्हारे कथन पर निर्विवाद रूप से विश्वास करने को मैं उद्यत हूँ, परन्तु मेरी कल्पना का निरादर तुम इतना क्यों करती हो, यह मैं नहीं समझ पाया । जीवन में कल्पना ही सत्य होती है । वर्तमान सत्य का पूर्व रूप कल्पना नहीं तो और क्या था कविते ?”

“उससे मेरा कोई सम्बन्ध नहीं । व्यर्थ कल्पना और चिन्ता से सम्बन्ध स्थापित करना सौंदर्य और माधुर्य का ह्रास करना है । तुमने हाथ में दर्पण लेकर उसमें अपना मुख देखने की सम्भवतः कभी चेष्टा नहीं की । लो मैं तुम्हें दिखलाती हूँ ।”

कामिनी ने दर्पण ‘शून्य’ जी के हाथों में देकर कहा, “देखिए आपका मुख कैसा है ? तुम्हारी माँ आज यहाँ होती तो तुम्हारा मुख देखकर उनका हृदय फट जाता । मैं नारी होने के नाते तुम्हारी माता के हृदय और उनकी भावना को परख रही हूँ ।”

यह कहकर कामिनी इस तरह से मुस्कुराई कि ‘शून्य’ जी पागल हो उठे । उन्होंने यहाँ से भाग निकलने का प्रयत्न किया परन्तु कामिनी के नेत्र-बंधनों को तोड़ कर भाग जाना उनके लिए असम्भव था । कामिनी ‘शून्य’ जी के पास सोफ़े पर जाकर बैठ गई । दौया हाथ शून्य जी के गले में डालते हुए उनके उलझे बालों की एक लट जो किसी प्रकार बल खाकर कनपटी तक छितरा रही थी एक ओर हटा दी और फिर धीरे-धीरे बोली, “कविता एक फुलवाड़ी है कवि ! जिसे लगाना और बात है और सुरक्षा प्रदान करना, मंहकाना और हरा-भरा रखना और बात—परन्तु जाने दो इन बातों को । मैं तुम्हारे जीवन में एक अभाव देख रही हूँ और यदि मैं गलत नहीं हूँ तो वह अभाव एक नारी का है, जिसने तुम्हारे जीवन की दिशा बदल दी है ।”

कविवर ‘शून्य’ जी ने तरसते हुए नेत्रों से कामिनी के मुख पर देखा, मानो कामिनी ने उनका हृदय खोलकर उनके सम्मुख रख दिया । कामिनी ने फिर कहना प्रारम्भ किया, “उस स्त्री ने तुम्हारा जीवन लक्ष्य-विहीन कर दिया है । तुम्हारे जीवन का सहयोग न बनकर वह स्त्री स्वयं भी अपने जीवन-पथ पर भटक पड़ी और उसने तुम्हारे जीवन की पतवार को भी प्रबल वेग से बहती हुई धारा में फेंक दिया ।” और इतना कहकर कामिनी ने ‘शून्य’ जी की दाँई आँख के ऊपर वाली रेखा पर अपने नेत्र गड़ाकर कहा, “बस और फिर कभी । मैंने तुम्हारे मस्तक

की रेखाओं को पढ़ कर जो कुछ भी बतलाया वह असत्य तो नहीं है कवि !”

कवि मौन था। कामिनी ने उसके गत-जीवन का इतिहास चार शब्दों में उसके सम्मुख रख दिया। सुशीला की धन-लिप्सा ने उसे प्रकाश बाबू के फंदे में फँसा कर उसका जीवन अपने हाथों में जकड़ लिया था, उसके जीवन की प्रगति नष्ट कर दी थी। उसके जीवन का विकास रुक गया था। जीवन बन्धनों में बँधकर एक मशीन का टुकड़ा बन गया था। उसकी कविता प्रयोजनविहीन कला का निर्जीव दिग्दर्शन मात्र रह गई—कोरा विज्ञापन जिसमें वास्तविकता का लेश भी नहीं रहा।

“तुमने जो कुछ कहा सत्य कहा कविते !” इतना कहकर ‘शून्य’ जी ने उठने का प्रयास किया।

“तुम अब जा नहीं सकोगे कवि !”

“क्यों ?”

“वह इसलिए कि मुझे अभी तुम्हारे जीवन का बहुत कुछ अध्ययन करना शेष है।”

“यह सब कल होगा कविने ! इस समय मैं जारहा हूँ। यदि तुम मुझे इस समय नहीं जाने दोगी तो मैं पागल होजाऊँगा। मैंने अपने एक मित्र की आशाओं पर तुषारापात किया है। इस समय मैं उन्हीं से क्षमा-याचना करने जारहा हूँ।”

“क्षमा माँगना जीवन की दुर्बलता है। इससे प्रगति रुक जाती है और विकास का मार्ग अवरुद्ध होकर व्यक्ति अपने कर्तव्य की पूर्ति केवल क्षमा-याचना तक ही समझ लेता है। मैं तुम्हें इस दुर्बल प्रवृत्ति के लिए कभी भी अनुमति नहीं देसकती।”

‘शून्य’ जी के पैर द्वार की ओर बढ़ते-बढ़ते रुक गये। कामिनी सोफ़े से उठकर ‘शून्य’ जी के पास आगई और उसने धीरे से उनका हाथ अपने हाथ में ले लिया। फिर दोनों कोठी से निकलकर बाहर लॉन में आगये। परन्तु दोनों मौन थे, शब्द-विहीन।

: १७ :

मन्दी का प्रभाव भारत की प्रत्येक वस्तु पर पड़ा। केवल मिलों में बनने वाली वस्तुओं पर ही नहीं वरन् छोटी फैक्ट्रियों पर भी उसका प्रभाव पड़ा। बाज़ार में माँग कम होजाने से चीजों के दाम गिर गये। घी, दूध, जूते, लोहे का सामान और लकड़ी के सामान पर भी मंदी का प्रभाव इसी प्रकार हुआ जिस प्रकार कपड़ा, तेल, चीनी इत्यादि पर।

प्रोफेसर सुधांशु ने इस गम्भीर समस्या को हल करने का उपाय सोचा। उन्होंने सरकार की बुराई करने पर समय नष्ट नहीं किया और न ही अप्राकृतिक कारणों को उपस्थित करके वस्तुओं का मूल्य फिर से बढ़ा देने की ही सरकार से माँग की। वह जानते थे कि विश्व की राजनीतिक उथल-पुथल का जो प्रभाव सब देशों की आर्थिक स्थिति पर पड़ा है उसे बनावटी कारणों से नहीं रोका जा सकता।

प्रोफेसर साहब ने अपने संघ के पाँचों गाँवों के प्रतिनिधियों की एक बैठक बुलाकर देश तथा राष्ट्र के सम्मुख आनेवाली परिस्थिति को उपस्थित किया और बतलाया कि किस प्रकार इस मन्दी की समस्या का सामना किया जा सकता है। आज की सभा के सभापति-पद से भाषण देते हुए आपने कहा, “प्रिय बन्धुओं !

यह संकट का समय है, इसमें कोई सन्देह नहीं, परन्तु इसका सामना रोने-गाने और सरकार की टीका-टिप्पणी करने से नहीं किया जा सकता। सरकार के पास कोई जादू नहीं है कि जिससे वह आप लोगों की समस्याओं का हल निकाल कर सामने रख दे।

आप लोगों ने देखा और सुना होगा कि गत महा-युद्ध के छिड़जाने पर अनेकों व्यक्ति बैठे-बैठे बिला परिश्रम के ही मालामाल होगये। रुपये का अवमूलन होता गया और नोटों की गड़िय़ाँ लोगों की तिजोरियों में दिखलाई देने लगीं। बड़ी-बड़ी रकमों खातों में दिखलाते सेठों

के दिल दहल उठे और काले बाजार का युग प्रारम्भ होगया। वह युग आपत्ति-काल की देन था, जिसका जन्म संसार की पारस्परिक फूट से हुआ था। आज युग बदल रहा है। संघर्ष संसार से एक दम समाप्त नहीं हो गया, परन्तु फिर भी विश्व-युद्ध की सम्भावना कम होगई है।

इसी से बाजार में मंदी आई है। सट्टेबाजों और पोल का लाभ उठाने वालों के लिए यह सर्वनाश का समय है, परन्तु कर्मठ व्यक्तियों को इससे घबराने का मैं कोई कारण नहीं समझता।”

“कठिन परिस्थिति का हम डट कर सामना करेंगे।” सबने एक स्वर में कहा।

“मुझे आपसे यही आशा है और मुझे विश्वास है कि हमारा संघ सामने आनेवाली इस कठिन परिस्थिति में अपनी दृढ़ता का परिचय देगा। इस कठिन परिस्थिति का सामना करने के लिए हमें दृढ़ संकल्प के साथ अपने-अपने कामों पर और भी कटिबद्धता के साथ जुटजाना होगा। हम आठ घण्टे काम करने के स्थान पर दस घण्टे काम करेंगे और इस प्रकार मजदूरी की दर घटाकर उत्पादन को सस्ता करने में सहयोग देंगे। हमारा उत्पादन बढ़जाने से हमारी आय में कमी नहीं होगी।”

“हम सब आपके मत से सहमत हैं।”

“हम लोग देश और राष्ट्र के लाभ के लिए हर प्रकार का बलिदान देने को उद्यत हैं। अधिक मेहनत करना देश और राष्ट्र की शक्ति को बढ़ायेगा। हमारा हर प्रकार का सहयोग आपके आदेश के साथ रहेगा।”

मिस केतकी के इन शब्दों को सुनकर सबने करतल-ध्वनि की और नियाज अहमद ने कहा, “हमारे देश का मजदूर जब देश और राष्ट्र की जरूरतों को समझकर त्याग के साथ आगे बढ़ेगा तभी हमारी तरक्की होगी। मैं चौबीस घण्टे काम करने को तय्यार हूँ। हम अधिक-से-अधिक मेहनत करके कम-से-कम मूल्य पर अच्छा और सुन्दर उत्पादन करेंगे। हमें रुपये की व भी कमी नहीं हो सकती। हमारा माल तय्यार

होने से पहले बिक जाता है । हम गोदामों में माल बन्द करके उसपर काला बाजार करने का प्रयत्न नहीं करते । हमें लम्बा-चौड़ा मुनाफा नहीं कमाना है । हमें करोड़पति बनकर पूँजी के बोझ में इन्सान को कुचल देने की कोशिश नहीं करनी । हमारा मुनाफा मजदूरी से ऊपर सिर्फ दाल में नमक के समान होता है । आप यकीन रखें कि यह मंदी की हवा हमारा कुछ नहीं बिगाड़ सकती । हम लोग रात दिन एक करके भी मंदी के असर से अपने को दबने नहीं देंगे ।”

“नहीं दबने देंगे”, सब एक साथ बोले । “हम रात दिन परिश्रम करके अपना उत्पादन बढ़ायेंगे और अपने परिश्रम के बल से मन्दी के प्रभाव को नष्ट कर देंगे ।

“मुझे यही आशा थी कुछ दिन पश्चात् कच्चे माल के मूल्य में अव-मूलन होने पर उत्पादन और भी सस्ता हो जायगा और उस समय तुम्हारा यह अधिक परिश्रम अधिक आय में परिणित होकर आपको उन्नति के पथ पर अग्रसर करेगा । वह समय अब दूर नहीं है जब हमारे संघ का प्रत्येक मकान सुन्दर और पक्का बन जायगा और बस्तियों की सड़कें तथा नालियाँ भी पक्की हो जायेंगी । अपने संघ के उस नव-निर्माण की योजना मैं तय्यार कर चुका हूँ और अब हमे उस योजना पर कार्य प्रारम्भ करना है । परन्तु उस कार्य को प्रारम्भ करने से पूर्व हमें इस मन्दी से टक्कर लेनी है ।

प्रोफेसर सुधांशु की बात का सबने समर्थन किया और दूसरे दिन से संघ के सब कारखानों में आठ घण्टे के स्थान पर दस घण्टे कार्य होने लगा । सभी फैक्ट्रियों का उत्पादन बढ़ गया और इससे फैक्ट्रियों की आय में किसी प्रकार की कमी नहीं आई बल्कि और बढ़ोतरी ही हुई ।

“आपने जो संघ के नव-निर्माण की योजना कल प्रस्तुत की थी वह मुझे बहुत पसन्द आई । उसके अनुसार कार्य का वितरण और उसकी

सुव्यवस्था से प्रत्येक व्यक्ति को अपना पूरा-पूरा समय उत्पादन-कार्य के लिए लगाने का अवसर मिलेगा ।”

“इसीलिए मैं संघ के कार्य का नवीन विभाजन करने का स्वप्न देख रहा हूं केतकी ! मेरा विश्वास है कि मेरी इस नवीन योजना के प्रसारित होजाने पर संघ की फैक्ट्रियों का उत्पादन ड्योढ़ा होजायगा ।”

“निश्चित रूप से हो जायगा । कोई शक्ति उसे रोक नहीं सकती । यह हमारे संघ की सफलता होगी और हमारे संघ की सफलता हमारे राष्ट्र की उन्नति का साधन बनेगी ।”

ये बातें हो ही रही थीं कि सामने से नियाज़ अहमद का ट्रक आता हुआ दिखाई दिया । मिस केतकी ट्रक को आते हुए देखकर धीरे से बोलीं “काम करने वाला हो तो नियाज़ साहब जैसा हो, तपस्या की स्वर्ण-मूर्ति ।”

“मेरी योजनाओं की सफलता नियाज़, तुम्हारे और सुभद्रा के कठिन परिश्रम का परिणाम है केतकी ! योजना निरर्थक हैं, कल्पना मात्र हैं, यदि सही-सही समझ कर कार्यरूप में परिणित करने वाले कार्यकर्त्ता न हों । यह कहते हुए उन्होंने एक चित्रों का लिफाफ़ा मिस केतकी के सम्मुख खोलते हुए कहा, “यह है बनस्थली का क्रमिक विकास । यह सब आप लोगों के परिश्रम का इतिहास है ।”

नियाज़ अहमद ट्रक से उतर कर इन्ही दोनों व्यक्तियों के पास एक झूड़े पर आ बैठे और माथे का पसीना पोंछते हुए गम्भीर स्वर में बोले, “प्रकाश बाबू के कई मिलों में हड़ताल होगई । कपड़ा-मिल को किसी ने आग लगादी । पुलिस हड़तालियों पर हाथ साफ कर रही है । और रात जो भूकम्प आया था उसमें प्रकाश बाबू का दस मंजिला महल जिसकी अभी तीन ही मंजिलें बनी थीं, उसकी तीसरी मंजिल गिर कर चूर-चूर होगई ।

प्रोफेसर सुधांशु और मिस केतकी को हार्दिक खेद हुआ परन्तु उसे

प्रकट न करते हुए मिस केतकी ने पूछा, “कोई झगड़े की तो सम्भावना वहाँ दिखाई नहीं दे रही थी नियाज़ भय्या !”

“पुलिस के पहुँचने पर भीड़ काई की तरह फटगई। चन्द इने-गिने आदमियों को छोड़कर सब भाग खड़े हुए। मैं तो दूर से केवल इतना ही देख पाया।”

“समय की परिस्थितियों को भुला कर प्रकाश बाबू तथा मजदूर-नेता दोनों ही राष्ट्र का अहित करने पर उतारू हुए हैं। मजदूर समझते हैं कपड़ानमिल को जलाकर प्रकाश बाबू से उनकी निरंकुरता का प्रति-शोध ले रहे हैं परन्तु वे यह नहीं समझते कि मिल को इस प्रकार नष्ट करके उन्होंने कितने मजदूरों को बेरोज़गार कर दिया।”

“परन्तु पहल किसने की ?” नियाज़ अहमद बोले।

“पहले और बाद का प्रश्न न्यायालय निश्चित करेगा। उस पर विचार करना हमारा काम नहीं। हम तो केवल यही समझते हैं कि यह प्रवृत्ति दोनों ही दलों के लिए असन्तोषजनक है और राष्ट्र-हितों की सुरक्षा इस प्रवृत्ति को धारण करके न प्रकाश बाबू ही कर सकते हैं और न मजदूर नेता ही। दोनों ही राष्ट्र के साथ शत्रुता कर रहे हैं और इसी लिए राष्ट्र की दृष्टि में दोनों समान रूप से दोषी हैं।” प्रोफेसर सुधांशु बोले।

“व्यवहार के क्षेत्र में कोरा सिद्धान्त काम नहीं देता प्रोफेसर साहब ! आज प्रथम बार मुझे नियाज़ भय्या के मत का समर्थन करना पड़ रहा है। संघर्ष मैं भी नहीं चाहती, परन्तु जब सिर पर आपड़े तो उससे पीठ दिखलाना भी कायरता है। प्रकाश बाबू का मजदूरों के प्रति दुर्व्यवहार ही इस सब उथल-पुथल का कारण है।”

“परन्तु तुम इतनी दृढ़तापूर्वक कैसे कह रही हो केतकी !”

“एक विश्वस्त सूचना के आधार पर।”

नियाज़ अहमद मिस केतकी के मुख से अपनी बात का समर्थन पाकर बहुत प्रसन्न हुए।

मिस केतकी चिकित्सालय को चली गई और नियाज अहमद अपने काम पर। प्रोफेसर सुधांशु चिंता-निमग्न जहाँ के तहाँ मौन-मुद्रा में बैठे रहे। प्रकाश बाबू के सामने आने वाली समस्याएँ रह-रह कर उनके सामने आखड़ी होती थीं, और उनका हल खोज निकालना भी कठिन कार्य नहीं था। परन्तु उन्होंने सोचा, प्रकाश बाबू दम्भी, कपटी और पाखण्डी हैं। पाखण्ड और कपट को ही वह व्यापार की मूल-शक्तियाँ मानते हैं। ऐसी परिस्थिति में कोई भी सही मुभाव उनके सामने प्रस्तुत करना विडम्बना मात्र होगा। उनके पास जाने का भी परमात्मा जाने वह क्या ग्रंथ लगायें, उसमें मेरी क्या-क्या स्वार्थ-सिद्धि समझें। यदि वह कुछ समझ भी पायें तो उनके साथी उन्हें सही मार्ग पर नहीं आने देंगे। कार्य सिद्ध हो या बर्बाद, उनका कमीशन चलता है। माल बिकने और खरीदने में, चाहे वह लाभ में हो अथवा हानि में, उन्हें लाभ ही होता है। '...नहीं, कुछ नहीं किया जा सकता।' और वह अपने माथे पर हाथ रखकर थके मन से बैठ गये।

: १८ :

जब प्रकाश बाबू निराश होकर कामिनी की ओर से खिंचे तो वह सिमट कर पास में आ गई और जब प्रकाश बाबू ने कामिनी को सुलभ समझ कर अङ्कु में भरने के लिए हाथ बढ़ाये तो वह मुरक कर दूर जा खड़ी हुई। कामिनी एक समस्या बन गई प्रकाश बाबू के लिए। 'शून्य' कवि को कल जानवर घोषित करनेवाली कामिनी आज उनके हाथ में हाथ डाले लॉन में घूम रही थी। इसकी प्रकाश बाबू को स्वप्न में भी आशा नहीं थी। परन्तु आँखों को धोखा नहीं दिया जा सकता था। प्रकाश बाबू उल्टे पैरों लौट लिए। कामिनी ने प्रकाश बाबू को आते और लौटते देखा। उसके हृदय को शांति मिली कि वह प्रकाश बाबू के उस

हृदय को ठेस पहुँचाने में सफल हुई जिसने नारी को क्रय-विक्रय की सामग्री समझ लिया था ।

“तो कवि ! तुमने प्रोफेसर सुधांशु का साथ छोड़कर प्रकाश बाबू की नौकरी करली ।” अचानक ही कामिनी ने पूछा ।

“यही समझ लीजिए आप, परन्तु नौकरी करने के अभिप्राय से मैं यहाँ नहीं आया । मेरे यहाँ आने का कारण थी सुशीला और उसी के आग्रह को टालने का साहस मैं न कर सका ।”

“तुम कला के पुजारी बनकर प्रकाश बाबू के मायाजाल में फँस गये और तुमने अपनी प्रतिभा का उपयोग प्रकाश बाबू की आज्ञा-पालन करने के लिए किया, यही किया न ?”

“बिल्कुल यही कविते ! परन्तु कला की सेवा मान कर ।”

“ठीक है ।” इतना कह कर वह व्यग्य के साथ मुस्कारा दी ।
“तुम्हारा कला का दृष्टिकोण बुद्धि से सम्बन्ध नहीं रखता कवि ! आज मैं अपने फिर उन्हीं शब्दों को दुहरा रही हूँ जिनसे रूठकर एक दिन तुम मुझे अकेली छोड़कर सुशीला के पीछे दौड़ गये थे । परन्तु यह तुम्हारे जीवन की वह दुर्बलता थी जिसपर तुम्हारा अधिकार नहीं था ।”

‘शून्य’ जी कामिनी की इस बात का क्या उत्तर दें, यह उनकी समझ में नहीं आया । कामिनी के कथन में असत्यता नहीं थी, यह ‘शून्य’ जी का हृदय अनुभव कर रहा था । वह कुछ कहना ही चाहते थे कि कामिनी मुस्करा कर इठलाती हुई आँखों को घुमा कर बोली, “तुमने मुझे कविते ! कहकर सम्बोधित किया । क्या मैं पूछ सकती हूँ कि इस शब्द के प्रयोग का बुद्धि से कोई सम्बन्ध है ?”

“है कविते ? ... परन्तु जाने दो इन बातों को । जीवन में बुद्धि ही तो सब कुछ नहीं है । भावना, कल्पना, इच्छा और अकांक्षा ये सब भी तो कुछ महत्व रखती है । जीवन के निर्माण में क्या तुम्हारी दृष्टि से इनका कोई महत्व नहीं है ?”

“है क्यों नहीं ? परन्तु बुद्धि-विहीन भावना और कल्पना मानव

को गढ़े में भी ढकेल सकती हैं। क्या तुम अपने को इस परिस्थिति से कुछ ऊपर समझते हो कवि ?”

‘शून्य’ जी फिर मौन हो गये। उनके पास फिर कोई उत्तर नहीं था। कामिनी बोली, “मेरा सौंदर्य तुम्हें भटका भी सकता है। सौंदर्य में स्थायित्व नहीं होता और उसी प्रकार मैं भी स्थायी नहीं हूँ। मेरा मन चंचल है, बहुत चंचल। मेरी इच्छाएँ प्रबल हैं, बहुत प्रबल। मेरी कल्पना मधुर है, बहुत मधुर। मेरा जीवन मुक्त है, नितांत मुक्त। कोई बंधन मैं नहीं जानती, कोई प्रतिबन्ध मैं नहीं मानती। प्रकाश बाबू भी स्वतंत्र प्रकृति के व्यक्ति हैं। इसीलिए मैं उन्हें प्यार करने लगी हूँ।”

“प्यार करने लगी हो ? परन्तु प्रकाश बाबू तो प्यार को मूर्खता कहते हैं।”

“सो तो मैं भी कहती हूँ। परन्तु कवि ! संसार में जो कुछ भी कोई व्यक्ति कहता है वह करता नहीं, जो करता है वह सोचता नहीं और जो सोचता है उसकी कल्पना नहीं करता। किसी भी व्यक्ति के जीवन को समझ लेना खेल नहीं है। और न ही संसार में व्यक्तियों का जीवन इतना सरल ही होता है जितना तुम्हारा।”

“मेरा जीवन तुम्हें सरल दीखता है कविते ! मेरी कविताएँ एम० ए० में पढ़ाई जाती हैं। बड़े-बड़े डाक्टर, आचार्य मेरी कविता का अर्थ नहीं लगा सकते और तुमने मेरा जीवन पढ़ते समय उसे साधारण कोटि में लाकर रख दिया। मैं तो समझ ही नहीं पा रहा हूँ कामिनी ! यह सब क्या है ? मैं वास्तव में मूर्ख हूँ या तुम्हारे सौंदर्य-जाल ने मुझे मूर्ख बना दिया है। आज मेरा विचार हो रहा है कि चलो हम लोग इस समस्या को लेकर मिस केतकी से बातें करें। वह निश्चित रूप से इसका सही उत्तर दे सकेंगी।”

“मिस केतकी ! हाँ तनिक यह तो बतलाओ कवि ! कि यह मिस केतकी कौन हैं ?”

“मिस केतकी ! मिस केतकी को नहीं जानतीं कविते ! चलो आज

तुम्हारा परिचय मिस केतकी से करा लाता हूँ। तुम निश्चय ही उनसे भेंट करके बहुत प्रसन्न होगी। वह देवि हैं, वास्तव में देवि ! क्या मस्तिष्क पाया है उस महिला ने, मैं वर्णन नहीं कर सकता। मेरी कविता मौन हो जाती है उनके सम्मुख और बस देखते और सुनते ही बनता है। निस्वार्थ सेवा का उन्होंने व्रत लिया है और हमारे मित्र प्रोफेसर सुधांशु के साथ नव-निर्माण-कार्य में जुटी हैं।”

“नव-निर्माण-कार्य में ?” कामिनी ने पूछा।

“हाँ-हाँ ! नव-निर्माण कार्य में।” यह कहते-कहते खड़े होकर कवि ने अपनी दोनों एड़ियाँ उचकाते हुए दूर पश्चिम में संकेत करके कहा—
“देखती हो कविते ! वहाँ क्षितिज के पास एक थोड़े से मकानों की बस्ती दिखलाई देरही है। इस बस्ती का नाम बनस्थली है। वहीं इन योजनाओं का केन्द्र प्रोफेसर सुधांशु ने स्थापित किया है।”

“परन्तु वह नव-निर्माण है क्या ? कुछ इसका भी तुम्हें ज्ञान है ?” उत्कण्ठा लेकर कामिनी ने पूछा।

“यह सब मैं नहीं जानता। हाँ इतना अवश्य सुना है कि प्रोफेसर साहब की योजना बहुत दृढ़ता और सुन्दरता के साथ चल रही है। बस्ती के रहने वाले सभी लोग प्रसन्न हैं और जब से प्रोफेसर साहब ने उस गाँव में पदार्पण किया है शिक्षा के प्रचार के साथ-साथ वहाँ के रहने वालों की आर्थिक स्थिति भी सुधरी है। गाँव के सब लोग प्रसन्न हैं और उनके स्वास्थ्य-रक्षा का भी सुन्दर प्रबन्ध हो गया है। मिस केतकी स्वयं एक कुशल डाक्टरनी हैं।

‘शून्य’ जी को नव-निर्माण का जितना ज्ञान था वह सब उन्होंने कामिनी को प्रेम-पूर्वक समझा दिया। कामिनी की इच्छा होआई कि वह चलकर उसे देखे और यदि वास्तव में वहाँ उसके योग्य कोई कार्य हो तो उसे अपना सहयोग प्रदान करे।

‘शून्य’ जी को साथ लेकर प्रकाश बाबू की कोठी के सामने से होती हुई कामिनी सुशीला और प्रकाश बाबू के नेत्रों में चुभ कर मस्ती में

भूमती हुई रेशमी जाजेंट की साड़ी के सुनहले पल्ले को कंधे पर डाले बनस्थली की ओर बढ़चली। मन्द-मन्द पवन के साथ हल्के-हल्के झोंकों में कामिनी के घुँघराले बाल उड़ रहे थे और उन्हें संभालने के लिए कभी-कभी वह अपना हाथ सिर पर फेर लेती थी। सुशीला कोठी की खिड़की से और प्रकाश बाबू सामने लॉन में खड़े-खड़े देख रहे थे और न जाने कितनी देर तक देखते रहते यदि इसी समय सरदार लुहारा-सिंह और बैरिस्टर पुण्डरीकर वहाँ न आजाते।

तीनों व्यक्ति लॉन में बैठ गये। कोई अन्य व्यक्ति वहाँ नहीं था, इसलिए कोई बात छिपाने की आवश्यकता नहीं थी। पूरा कच्चा चिट्ठा खुलकर सामने आगया। बैरिस्टर पुण्डरीकर बोले, “यदि इस समय परिस्थिति से संघर्ष करना है तो हमें अपने हानि पहुँचाने वाले कामों को एक दम बन्द कर देना चाहिए।”

“महल को दुबारा बनाने की बात सोचनी ही नहीं चाहिए।”

“यह नहीं होगा। यह मेरे मान-अपमान का प्रश्न है।”

“यह नहीं होगा ! तब क्या रुपये का कोई प्रबन्ध होगया है ?”

“नहीं।”

“फिर ?”

“महल का दुबारा न बनना मेरी मृत्यु है। मिस केतकी के सम्मुख मैं अपनी योजना का मॉडल अवश्य प्रस्तुत करूँगा। सूर्य पूर्व से निकलना बन्द करके पश्चिम से निकलने लगे परन्तु मेरा दस मजिल का महल अवश्य बनेगा।”

“परन्तु उस महल पर बैठ कर निरीक्षण करने के लिए जब कार-खाने ही नहीं रहेंगे तो महल का क्या बनेगा ? आज चारों ओर जो बची-खुची चहल-पहल भी दिखलाई देती है वह भी तुम्हारी आकांक्षाओं के महल की नीवों में कुट-कुट कर भर जायेगी। चारों ओर सुनसान नजर आयेगा—सन्नाटा, और उस सन्नाटे में यह महल भाँय-भाँय करके तुम्हें खाने के लिए दौड़ेगा। तुम पागल हो जाओगे प्रकाश बाबू ! पागल।”

“पागल ! पागल ।” और प्रकाश बाबू जोर से खिलखिला कर हँस पड़े। वह वास्तव में पागल हो गये। “मैं पागल हो जाऊँगा।” यह कहते हुए पागल की भाँति लॉन में घूमने लगे। उनका सिर चकरा रहा था और पुतलियाँ चढ़ गई थी। वैरिस्टर पुण्डरीकर और सरदार लुहारासिंह जी भयभीत होकर चुपके से एक ओर को खिसक लिए। रानी ‘सुशीला’ ने प्रकाश बाबू की यह दशा देखी तो वह भी भयभीत हो उठी। किसी प्रकार साहस करके प्रकाश बाबू के पास गई और उन्हें कमरे में ले जाकर पलंग पर लिटा दिया प्रकाश बाबू को नींद आ गई। नींद में पहले तो वह कुछ समय तक शान्त बने रहे परंतु फिर बड़बड़ाने लगे। कोठी के सब नौकर-चाकर आकर एकत्रित हो गये।

प्रकाश बाबू पागलपन में पलंग पर उछल-उछल कर कह रहे थे; ‘सुधांशु ! तुम्हें केतकी पर हाथ साफ करके भी संतोष नहीं हुआ। मैं अपनी इस कठिन परिस्थिति में किसी प्रकार अपने को संभालने के लिए कामिनी को लाया तो तुमने उसपर भी डोरे डालने प्रारम्भ कर दिये। यह सब तुम अच्छा नहीं कर रहे हो सुधांशु ! अपना मॉडल तैयार करके तुम्हें अभिमान होगया है, परन्तु मेरी असफलता सिद्धान्त स्वरूप न होकर परिस्थितियों के वश हुई है। मैं अपने को असफल नहीं मानता। सफलता मैं प्राप्त करूँगा और एक दिन केतकी को यह दिखला दूँगा कि जो महानता और गौरव मेरी योजनाओं में है उनके सम्मुख सुधांशु की योजनाएँ बच्चों का खिलवाड़ है। इतना कहकर वह शांत हो गये। ये वाक्य मानो प्रकाश बाबू को रट गये थे और वह पाँच-सात मिनट मौन रहकर फिर इन्हीं शब्दों को दुहराने लगते थे।

अचानक प्रकाश बाबू उठकर बैठ गये। दो तीन नौकरों ने उन्हें संभाला। वह बड़ी दीन भाषा में बोले, ‘सुधांशु ! तुम मित्रता निभाने के लिए आये हो। ऐसे ही होते हैं मित्र ! तुम विश्वासघात कर रहे हो। सुशीला रानी को भी छीनकर लेजाना चाहते हो। मैं मान गया कि तुम्हारे पास स्त्रियों का वशीकरण-मंत्र है परन्तु’ इतना कहकर

प्रकाश बाबू पीछे को लेट गये । उनका बदन थर-थर काँप रहा था और बड़े वेग से पसीना छूट रहा था ।

रानी सुशीला ने जिस डाक्टर को फोन किया था वह अपने औषधालय में नहीं था । दूसरे डाक्टर को बुलाने के लिए नौकर दौड़ाया । वह भी नहीं मिला । तभी मिस केतकी की कार अकस्मात् प्रकाश बाबू की कोठी के पोर्टिगो में आकर रुकी और उससे मिस केतकी तथा प्रोफेसर सुधांशु उतरे । प्रकाश बाबू की यह दशा देखकर दोनों बेचैन हो उठे । मिस केतकी प्रोफेसर सुधांशु को यही छोड़कर कार से अपने चिकित्सालय चली गईं और तुरन्त अपना दवाइयों का बक्सा लेकर लौट आईं ।

आवश्यकतानुसार मिस केतकी ने औषधि दी और अन्त में एक औषधि नींद आने की देकर पास वाली कुर्सी पर बैठ गई । प्रोफेसर सुधांशु और मिस केतकी के बैठे-बैठे भी प्रकाश बाबू ने वे पहले वाक्य कई बार दुहराये और उन्हें उच्चारण करते समय वास्तव में उनकी दशा बहुत ही दयनीय हो उठती थी ।

“बहन केतकी ! मैं आपकी हृदय से आभारी हूँ कि आपने इस कठिन समय में आकर मेरी सहायता की । मैं आपकी क्या सेवा कर सकती हूँ ?”

“आभारी होने की आवश्यकता नहीं है रानी ! मैंने अपने कर्तव्य का पालन किया है । प्रकाश बाबू विक्षिप्त अवस्था में प्रोफेसर सुधांशु के लिए जो अनर्गल बातें कह रहे हैं उन्हें सुनकर मुझे खेद हो रहा है । और सच यह है कि प्रकाश बाबू की वर्तमान स्थिति से जितना हार्दिक खेद प्रोफेसर सुधांशु को है उतना अन्य किसी व्यक्ति को नहीं होसकता । प्रकाश बाबू जो कुछ कह रहे हैं यह इनके अपने ही मन का पाप है ।”

कुछ ठहर कर मिस केतकी फिर बोलीं, “रानी सुशीला तुमने कवि से दीक्षा प्राप्त की है और पूँजीपति से पाणिग्रहण । ये दोनों ही भार तुम्हारे सिर पर इतने महान् हैं कि शायद जीवन में कभी इनसे मुक्त ही

न हो सकी। हमारी सेवा का भार सिर पर व्यर्थ वहन करने का कष्ट न करो। हमारी आपसे यही प्रार्थना है।” कहते-कहते मिस केतकी का गला भर आया और कंठ अवरुद्ध होगया। प्रोफेसर मुधांशु बिना एक शब्द भी बोले चुपचाप मिस केतकी के साथ उठकर कोठी से बाहर चले गये। चलते समय उन्होंने एक बार प्रकाश बाबू के मुख पर देखा और उनके नेत्रों से दो बूँद आँसू बह कर कमरे के फर्श पर टपक गये।

: १६ :

मन्दी का प्रभाव धीरे-धीरे बाजारों में विलुप्त होना आरम्भ हो गया। सोने का भाव जो एक बार एक सौ अठारह से घटकर बहत्तर और तिहत्तर को छू गया था फिर धीरे-धीरे ऊपर चढ़कर पच्चीसवाँ हो गया। गुड़ का भाव जो छः और सात को छूने चला था फिर दस से बातें करने लगा। जिन व्यापारियों ने धैर्य से काम लिया, वे मन्दी की ठसक को सँभाल गये। चोर बाजारों के लिए माल दबाकर रखने वालों के दिल दहल गये।

सरकार ने भी बहुत सी चीजों का निर्यात खोलकर तथा बहुत सी चीजों पर से निर्यात—कर में कटौती करकी उनकी दरों का क्रांतिकारी अवमूलन रोक दिया। इससे व्यापारिक क्षेत्र में अस्थिर वातावरण फिर स्थिर हो उठा और साहसी व्यापारियों ने अपनी परिस्थितियों को सँभाल लिया। इस आपत्तिकाल में जिन मजदूरों ने राष्ट्र के साथ विद्रोह किया और समय की आवश्यकताओं को न समझते हुए कठिन परिश्रम से मुख मोड़ा उन्हें मुँह की खानी पड़ी और जिन पूँजीपतियों ने अपने जर-जर साधनों द्वारा समय की बाढ़ को रोकने का असफल प्रयास किया वह स्थिर न रह सके। उनके पैर लड़खड़ाये और उन्हें चारों खाने चित्त गिरना पड़ा।

बनस्थली संघ ने इस आपत्तिकाल का सामना बहुत स्थिरता से किया और इसी लिए उसकी सभी फैक्ट्रियों का उत्पादन घटने के स्थान पर और बढ़ गया और इससे संघ की आय भी बढ़ गई। जिन फैक्ट्रियों में अभी तक केवल एक ही शिफ्ट में कार्य हो रहा था उनमें तीन-तीन शिफ्ट काम चलने लगा।

प्रकाश बाबू की बन्द मिलों के जिन मजदूरों ने इस संघ का सदस्य बनना स्वीकार किया उन्हें प्रोफेसर सुधांशु ने अपने साथ ले लिया।

बनस्थली की विशुद्ध चीजें देश भर में प्रचारित होगईं। जिस मन्दी के प्रभाव से देश के कई मिल बन्द हो गये, कितने ही कारखानों को ताला लग गया, कितनी ही यूनियनों को हड़तालें करनी पड़ीं, कितने ही मजदूर-नेताओं के प्रतिदिन व्याख्यान देने से गले पक गये, उसी के फलस्वरूप प्रोफेसर सुधांशु ने अपनी योजना को बल दिया।

प्रोफेसर सुधांशु की सभी योजनाएँ कठोर परिश्रम के आधार पर पल्लवित होती हुई आकाश-बल्लरियों के समान भारत के गगन-मण्डल में लहराने लगीं और तब देश के विभिन्न दलों के नेताओं, लेखकों, कलाकारों सामाजिक-कार्यकर्त्ताओं और विद्वानों की दृष्टि उस ओर गई।

सबने आश्चर्य के साथ देखा कि इस चमारों की गली सड़ी-बस्ती में, जिसमें सम्य व्यक्ति बिना दस पाँच बार नाक सिकोड़े घुस भी नहीं सकता था और जिसकी गलियों को कई बार महात्मा गाँधी अपने दल के साथ भाड़ू लगाकर भी स्थाई रूप से साफ़ नहीं कर सके, वह सौंदर्य और सुगन्ध-युक्त पुष्पों के भार से भूमती हुई बेल-वल्लरी आशा और अरमानों से भरे स्वच्छ और सुन्दर आकाश का चुम्बन कर रही थी। सब की दृष्टि इस वाटिका के माली पर गई और देखा कि वह कितनी सादगी के साथ बनस्थली की उसी कच्ची चौपाल में बैठा हुआ गाँव के बच्चों को पढ़ाने में संलग्न था। वही नीम का वृक्ष था और उसका वही टूटा हुआ तख्त, जिसे ग्राम-वासियों ने एक दिन बड़े प्रेम और आदर

के साथ उन्हें सौंपा था। उसपर वही फटा हुआ मुजफ्फरनगर का काला कम्बल था जिसे अपनी जूते गाँठने की थली से उठा कर श्रद्धा के साथ बूढ़े साठ वर्ष के कालू चमार ने अपने काँपते हुए हाथों से प्रोफेसर सुधांशु के हवाले किया था।

सामने से नियाज़ अहमद, मिस केतकी, कविवर 'शून्य' जी, बहन सुभद्रा और मिस कामिनी की टोली आ रही थी। प्रोफेसर सुधांशु खड़े हो गये और सबका स्वागत किया।

“आपका स्वप्न पूर्ण होगया प्रोफेसर साहब ! पाँचों बस्तियों के सब मकान बनकर तय्यार हो चुके हैं। सब सड़कें पूरी होगईं। सब बस्तियों में दो-दो पाठशालाएँ, दो-दो वाचनालय और एक-एक चिकित्सालय बन गये। प्रत्येक ग्राम में एक-एक डेयरी है और बनस्थली में इन सभी के केन्द्र है।” मिस केतकी ने कहा।

“अब केवल आपकी इस चौपाल का नव-निर्माण होना है। आप अपना मकान चलकर देख लीजिए। वह गाँव के बीचोंबीच है और सब से अलग है।”

“कितना प्यारा मकान है आपका ?”

“क्या कामिनी को बहुत प्यारा लगा ?”

“बहुत प्यारा।”

“तो कामिनी और कविवर 'शून्य' जी उस मकान को सुशोभित करें। बनस्थली के हृदय में निवास करके कवि और तुम कविता और संगीत से ग्रामवासियों के जीवन को आनन्द और उमंग से भर दोगे।”

सब मौन थे, कामिनी और कविवर 'शून्य' जी के मस्तक श्रद्धा से प्रोफेसर सुधांशु के सम्मुख झुक गये और 'शून्य' जी तथा कामिनी ने अपना जीवन संघ की सेवा में अर्पण कर दिया। इस पर सभी उपस्थित सदस्यों ने प्रसन्नतापूर्वक तालियाँ बजाईं। मिस केतकी ने प्रेम-पूर्वक कामिनी का हाथ पकड़ कर कविवर 'शून्य' जी के हाथ में थमाते हुए कहा—

“भावना और सौंदर्य का यह मिलन बनस्थली-संघ के लिए शुभ हो, ऐसी हमारी हार्दिक कामना है ?

नियाज ग्रहमद ने आशा भरे नेत्रों से इस युगल जोड़ी के ऊपर निहारा, परन्तु उन्हें इस बात का खेद अवश्य था कि जो मकान उन्होंने अपनी श्रद्धा के पात्र प्रोफेसर सुधांशु के लिए अपनी विशेष देख-रेख में बनवाया था उसमें उन्होंने स्वयं रहना स्वीकार न करके उसे ‘शून्य’ जी को दे दिया। उन्होंने पूछा— ‘क्या मैं पूछ सकता हूँ कि प्रोफेसर साहब का अपना मकान बनस्थली में कौन सा रहेगा ?’

प्रोफेसर सुधांशु मुस्करा कर बोले, “जहाँ मैं बैठता हूँ, यही मेरा मकान होगा नियाज ! मैं जानता हूँ तुम्हारे मन में उठने वाली भावना को, परन्तु बनस्थली-संघ के क्या सभी मकान मेरे मकान नहीं हैं ? सब मकान एक से हैं। किसी में कोई अन्तर नहीं। मेरी कल्पना और आशा का मॉडल बनकर तय्यार हो गया। मैं चाहता हूँ कि भारत इसी प्रकार के संघों में विभक्त होकर अपने निवासियों को धन-धान्य से पूर्ण करता हुआ अपने में आप पूर्ण हो उठे। हमारे देश और देश की परिस्थितियों को समझने वाले महान् नेता महात्मा गाँधी ने इस संगठन की ओर सकेत किया था, परन्तु उनकी योजनाओं को समझने में अनभिज्ञ व्यक्तियों ने उन्हें अप्रगतिशील कहकर कार्य-रूप में लाने का विरोध किया। आविष्कारों के इस युग में, कल पुर्जों की रात दिन होड़ लगती हुई दुनियाँ में, मानव-जीवन को निगल लेने वाली साँय-साँय करती हुई प्रगति की भयंकर धारा में बहता हुआ आज का मानव-जीवन अशांति द्वारा शांति की ओर दौड़ रहा है। केवल दौड़ लगाना ही प्रगति नहीं है। प्रगति का अर्थ शिक्षा है, प्रगति का अर्थ सुख तथा शांति है, प्रगति का अर्थ मानव के हृदय में मानव की संवेदना है, प्रगति का अर्थ सम-भाव से मानव और मानव की शक्तियों का विकास है, प्रगति का अर्थ संघर्ष के क्षेत्र में शक्ति और प्रवृत्तियों का संचालन नहीं, अपने सुख तथा शांति के लिए दूसरों की छाती का रक्त चूसना नहीं,

नवीनतम आविष्कारों से विश्व को आतंकित करना नहीं ।

मै आशा करता हूँ कि बनस्थली-संघ भारतवासियों के सम्मुख ऐसा ही एक महान् दृष्टिकोण प्रस्तुत करेगा ।”

मिग केतकी, “अवश्य करेगा ।”

नियाज अहमद, “जरूर करेगा । “आपका बनाया हुआ यह बन-स्थली-संघ का मॉडल देश के सामने नई रूप-रेखा रखेगा ।”

इसके पश्चात् प्रोफेसर सुधांशु ने सब के साथ घूम कर संघ के पाँचों ग्रामों का निरीक्षण किया । सभी मकानों पर बन्दरवारें बँधी थीं और उनके सामने पास के मैदानों में स्वस्थ बच्चे खेल रहे थे । मार्ग में कई जगह प्रोफेसर सुधांशु का स्वागत किया गया । प्रोफेसर सुधांशु के साथ मिस केतकी के भी गले में पुष्प-मालाएँ डाली गईं । समारोह बहुत ही सुन्दर रूप से मनाया गया ।

जब यह टोली फिर चौपाल पर ओटकर आई तो सबसे आगे प्रोफेसर सुधांशु तथा मिस केतकी थे । दोनों के गले पुष्प-भार से भुके जा रहे थे । उनके पीछे कविवर ‘शून्य’ जी और कामिनी थे और उनके पीछे नियाज अहमद तथा बहन सुभद्रा थीं । उनके पीछे बहुत सी भीड़ थी । प्रोफेसर सुधांशु और मिस केतकी ने ज्यों ही चौपाल की पहली सीढ़ी पर पैर रखा तो कामिनी ने चुपके से मुस्कराते हुए मिस केतकी की साड़ी का एक पल्ला प्रोफेसर सुधांशु की लाँघ से बाँधकर गठ-बन्धन कर दिया ।

उसे देख कर नियाज अहमद और सुभद्रा बहन भी मुस्करा दिये और अन्य जिसकी भी दृष्टि इस मधुर गठ-बन्धन पर पड़ी उसी के अधरों पर मुस्कान बिखर गई ।



